History of South India

दक्षिण भारत का इतिहास

(King, War and State.)

For

(B. A. Students)

Author

Ashok Kumar Mukerjee M.A.

Lecturer of Ancient Indian History,
Vidyant Hindu Degree College.
Lucknow.
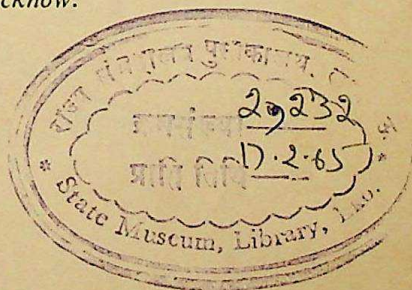
MAHALAXMI PRESS
LUCKNOW
1965

भूमिका

लखनऊ विश्वविद्यालय तथा अन्य विश्वविद्यालयों में दक्षिण भारत के राजनैतिक विषय पर एक नया Course आरम्भ हुआ है। लेकिन दुःख की बात है कि इस विषय पर कोई भी अलग से हिन्दी की पुस्तक उपलब्ध नहीं है। इस कारण छात्रों में कठिन समस्या आ गयी है। फलस्वरूप छात्रों की इस कठिनाई को दृष्टि में रखते हुए मैंने बहुत ही शीघ्र दो महीने के अंतर्गत इस पुस्तक को निकालने का भरसक प्रयत्न किया है। चूंकि पुस्तक बहुत ही कम समय में लिखी गई है इस कारण हो सकता है कि हिन्दी भाषा सम्बंधी त्रुटियाँ यत्र तत्र रह गयी हों। अतः मैं छात्रों से निवेदन करूंगा कि वे उपर्युक्त भाषा सम्बंधी त्रुटियों को ध्यान में न रखकर यदि पुस्तक को पढ़ेंगे तो अवश्य ही उन्हें सफलता प्राप्त होगी। अंत में यदि यह पुस्तक छात्रों को कुछ अंश तक भी लाभप्रद हो सकी तो मैं अपने प्रयास को सफल समझूंगा।

! जयहिन्द !

अशोक कुमार मुकर्जी

INDEX

PART I

PART II

PART III

Most Important Questions.

1. Give a short history of the Chalukyas upto the time of Pulkesin II and account for his greatness.

   or

   "Pulkesin II" was greatest monarch of the house of Badami Chalukya.

2. Who were the Rashtrakutas? Describe the history of Govinda III or Dhruva or any greatest ruler of Rashtrakuta.

3. Describe the system of administration under the Rashtrakutas.

4. Give a short history of the Devagiri Yadavas upto the time of Singhana.

   or

   What do you know about the conquest of the Devagiri Yadaves by the Mussalmans and what part played by Ramchandra.

5. Give short history of the early Kadambas Kula of Banavasi.

   or

   Whom do you consider to be the greatest of the Kadambas of Banavasi Kings and why? or Estimate of Mrigesavarmma.

6. Who were the Pallavas or Origin and what do you know about the early Pallavas according to Prakrit Plate.

   or

   Give an estimate of Mahendravarman I or Narasimhavarman I or Nandivarman II.

   or

   Briefly review the course of the Pallavas Chalukyas struggle in the south.

7. Give a short history of Rajaraj or Ragendra I of Chola.
8. Describe the system of Chola Administration.
9. What was the relation between Chola and Sailandra (Srivijaya).
10. What was the relation between Chera (Kerala) and Chola.
11. Short Note :.—Hemadri, Chintamani, Karikala, Dantidurga, Tripartite Struggle, Amoghavarsha I. Chera.
12. What was the relation of Ganga or Pandya with Chalukyas and Rashtrakutas.

—:o:—

परिचय

दक्षिण भारत का इतिहास अध्ययन करने के पूर्व यह कह देना आवश्यक है कि राजनीतिक दृष्टिकोण से दक्षिण भारत को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। "दक्षिण पथ" तथा 'सुदूर दक्षिण"। Allahabad Pillar Inscription के आधार पर हम कह सकते हैं कि समुद्रगुप्त ने दक्षिण पथ के शासकों को पराजित किया था। प्राचीन काल में दक्षिण पथ में चालुक्यो तथा राष्ट्रकूटों का शक्तिशाली राज्य था इसके अलावा कुछ छोटे-छोटे राज्य भी थे। जैसे :—यादव एव कदम्ब कुल।

सुदूर दक्षिण में चोल और पल्लव दो मुख्य राज्य थे इसके अलावा पाण्डय तथा चेर दो अन्य छोटे राज्य थे। सुदूर दक्षिण के यह चारो राज्यों का उल्लेख Asokan Inscription Rock edicts No. II में भी किया गया है। इससे अनुमान लगता है कि यह चारो राज्य सुदूर दक्षिण में स्थित थे।

यहाँ के लोग तामिल भाषा बोलते थे इस कारण इसे Tamil Land भी कहते हैं।

प्राचीनकाल में यहाँ पूर्व द्रविड़ के लोग निवास करते थे। बाद में द्रविड़ लोग यहाँ आकर इस भूभाग में बस गये। द्रविड़ लोग पूर्व द्रविड़ों से अधिक सभ्य तथा शक्तिशाली थे! इन लोगों में तामिलों का दक्षिण का प्रभाव पड़ गया और दक्षिण के अधिकांश भाग को तामिल कम कहने लगे।

सर्वप्रथम "दक्षिण पथ" के चालुक्य और राष्ट्रकूटों के राज्यों का उल्लेख करते हैं फिर यादव और कदम्ब कुल के राज्यों का वर्णन करेंगे। अन्त में सुदूर दक्षिण के राज्यों का उल्लेख करेंगे।

(२)

बदामी या वातापी के चालुक्य

परिचय :— बदामी के चालुक्य राज्य का अभिप्राय साधारणता पूर्व कालीन पश्चिमी चालुक्य से बोध होता है। इस वंश ने दो सौ शताब्दी तक दक्षिणवर्ती भूभाग पर राज्य किया। इन्होने लगभग 550 AD से 750 AD तक राज्य किया और राष्ट्रकूटों के उदय होते ही इनका अन्त हो गया।

बदामी के चालुक्य Kanarese परिवार से संबंधित है जो कि अपने को क्षत्रिय बताते हैं। Hiuen Tsang ने Pulakesin II को क्षत्रिय बताते हैं। Hiuen Tsang refers to Pulakesin II as a "Kshatriya by birth".

Haraha Inscription of 553 AD में चालुक्य को शूलिक बताया। शूलिको का उल्लेख वृहत्संहिता में भी हुआ है।

Dr: Smith के अनुसार चालुक्य चपो (चाप लोग गुर्जर जाति की एक शाखा थे) से सम्बंधित थे।

D. C. Sarkar चालुक्यो को कन्नड़ जातिय मानते हैं जो कि अपने को क्षत्रिय कहने लगे।

बदामी के चालुक्य लोग अपने को मानव्य Manavya Gotra का कहते हैं।

बदामी के पश्चिमी चालुक्य की वंशावली
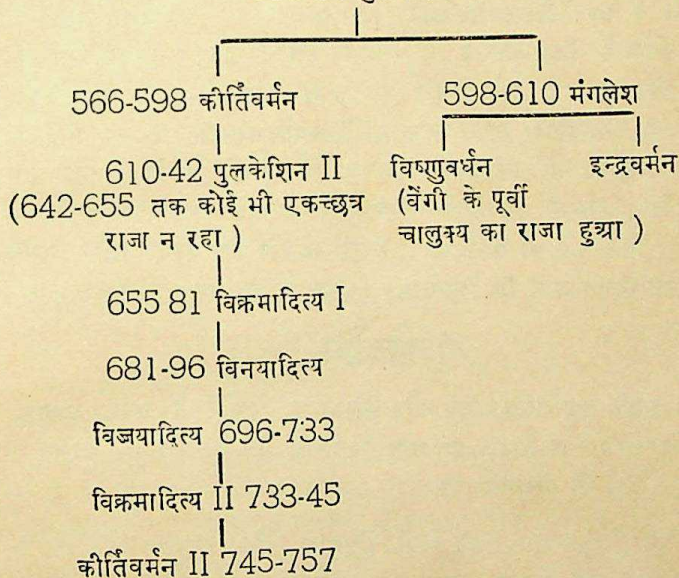
बादामी के प्रारम्भिक चालुक्य नरेश :—

पुलकेशिन I के पूर्व उसके पिता पितामह ने चालुक्य वंश पर राज्य किया और उनकी ख्याति इतनी अधिक नहीं है जितनी कि पुलकेशिन I के पुत्रो और पैपोत्र की है। पुलकेशिन I के पूर्वजों के समय कोई भी ऐसी घटना घटित न हुयी जो कि उल्लेखनीय हो और इतिहासकार भी इनके पूर्वजो के बारे में मौन हैं।

इस वंश का संस्थापक तथा प्रथम शासक जयसिंह था। जिसने राष्ट्र-कुटों और कदम्बो से लड़कर अपने एक स्वतन्त्र राज्य की नींव डाली थी। यह लोग Bijapur जिले के Badami क्षेत्र में अपना

राज्य कर रहे थे। जयसिंह को प्राय "जयसिंह वल्लभ" (Jayasimha Vallabha) के नाम से पुकारा जाता था वल्लभ उसकी पदवी थी। The Kauthem grant of Vikramadita V में उल्लेख है कि जयसिंह ने चालुक्य राज्य को पुनः स्थापना की थी जो राष्ट्रकूट नरेश इन्द्र के द्वारा ध्वंस (नष्ट) कर दिया गया था। जयसिंह एक महत्वाकांक्षी व्यक्ति था वह अपनी शक्ति के द्वारा चालुक्य राज्य को स्वतंत्र रक्खा और उसके पुत्र ने भी इसमें योग दान दिया लेकिन उसके पुत्र रणराग के समय में चालुक्यो की शक्ति का विशेष विकास न हो सका इसका मुख्य कारण यही था कि उसके समय में इतने साधन न थे कि जिससे वह विकास के पथ पर अग्रसर होता।

पुलकेशीन I

इसके बाद उसका प्रिय और योग्य पुत्र पुलकेशिन प्रथम चालुक्य के सिंहासन पर आसिन हुआ कहा जाता है कि पुलकेशिन I वास्तव में चालुक्य वंश का संस्थापक था।

Pulakesin I को Polekesin, Polikesin और Pulikesin से भी पुकारा जाता था जो कि Kanarese Sanskrit शब्द में इसका अर्थ "Tiger Haired" है। यह अपने वंश का पहला महाराजा था। इससे अनुमान लगता है कि पहले जो शासक हुये वह इतने शक्तिशाली नहीं थे जो कि अपने राज्य को आगे बढ़ा सकते, यद्यपि उसके पितामह ने अपने राज्य को राष्ट्रकुटों के हाथों से मुक्त किया था लेकिन आगे बढ़ाने का प्रयत्न नहीं किया। पुलकेशिन I ने 'सत्याश्रम' और 'रणविक्रम' की उपाधियाँ धारण की थी और उसे 'श्रीपृथ्वीवल्लभ' नामक विरुद से भी अनुराग था। चालुक्य वल्लभेश्वर के बादामी अभिलेख से पता चलता है कि पुलकेशिन I ने 'अश्वमेघ' तथा 'श्रौत' यज्ञों का अनुष्ठान किया था। कुछ लेखों से अनुमान लगता है कि उसने 'अग्निष्टोम', 'वाजपेय', हिरण्यगर्भ आदि यज्ञो का भी अनुष्ठान किया

था। यह बहुत ही साहसी और वीर व्यक्ति था। वीरता में इसकी तुलना ययाति और दिलीप से की गई है। वीर योद्धा होते हुये भी साहित्य में भी रुचि रखता था। वह विद्वान भी था। उसने मानव धर्मशास्त्र, पुराणों, रामायण, महाभारत और इतिहास का अध्ययन किया था। पुलकेशिन I का विवाह Durlabhadevi के साथ हुआ था जो Batpura परिवार से सम्बंधित थी। उसके बाद Badami लेख से अनुमान लगता है कि Vatapi किले की नींव इसने डाली थी जो आजकल आधुनिक बीजापुर जिले में Badami के नाम से परचित है। जो उसकी राजधानी थी। इसका राज्यकाल 535 AD से 566 AD तक निर्धारित किया जाता है।

कीर्तिवर्मन प्रथम

पुलकेशि I के पश्चात उसका महान् पुत्र कीर्तिवर्मन I ने अपने पैतृक राज्य को और भी अधिक विस्तार किया। उसके नाम से ही बोध होता है कि वह एक महान् कीर्तिमान पुरुष था। उसको 'Kirtiraja' के नाम से पुकारा जाता था। उसने Satyasraya और Puranaparakrama की उपाधि धारण की थी। उसके राज्य में अनेक निर्माण कार्य हुये थे जो राज्य की शोभा बढ़ाने में योगदान दिया करते थे। उसने अनेक मन्दिरों का निर्माण किया था।

मंगलेश के महाकूट स्तम्भ लेख के अनुसार कीर्तिवर्मन ने बंग, अंग, कलिंग, वत्तुर. मगध, मद्रक, केरल, गंग. मूषक, पाण्डय, द्रमिल, चोलिय, आलुक और वैजयन्ती के राजाओं को पराजित किया। इस अभिलेख की शैली कुछ अतिशयोक्तिपूर्ण है According to Dr. Mazumdar "There is litile doubt that the claim is a boastful exaggeration of a conventional 'dig-vijaya' or the conquest of the 'Chakravarti Kshetra'." अतएव हम पूर्णरूप से अनु-

मान नहीं लगा सकते कि उसने इतने राजाओं को पराजित किया था। लेकिन यह निश्चित है कि उसने इन राजाओं में से कुछ राजाओं को अवश्य ही पराजित किया था। यदि यह पूर्ण रूप से असत्य होता तो यह सब राज्यों का नाम लेख में उल्लेख न होता। कुछ भी हो वह एक महान् विजयता था। इसके अलावा उसके पुत्र के ऐहोल अभिलेख में (कीर्तिवर्मन) को नलों, मौर्यों और कदम्बों के लिए 'विनाश की निशा' कहा गया है। उसके युद्ध दक्षिणपथ मे ही सीमित रहे। यह अभिलेख विश्वासनीय प्रतीत होता है क्योंकि नलों, कदम्बों और मौर्यों के ऊपर उसकी विजय तथा ध्वंस की चर्चा चालुक्यों के अभिलेखों में भी मिलती है।

उसने अपनी राजधानी वदामी को नवीन भवनों और मन्दिरों से भी अत्यधिक अलंकृत किया। इस महान् शासक ने 566 AD से 598 AD तक राज्य किया।

मंगलेश

कीर्तिवर्मन I की मृत्यु के उपरान्त उसका सौतेला भाई मंगलेश सिंहासन पर बैठा। जिस समय कीर्तिवर्मन की मृत्यु हुई उस समय उसका पुत्र नाबालिग था। इसी कारण उसके सौतेले भाई के हाथ सिंहासन आया। वह विष्णु का परम भक्त था और भागवत धर्म का भी अनुयायी था। इसलिए उसे Paramabhagavata से सम्बोधित किया गया है। उसने अनेक गुहा मन्दिरों का निर्माण किया था जो कला के दृष्टिकोण से अत्याधिक आकर्षनीय और उत्कृष्ट माना जाता है। उन मन्दिरों में विष्णु की मूर्तियों की प्रतिष्ठा की गई थी। वह धार्मिक व्यक्ति होते हुए भी एक विजेता भी था। ऐहोल अभिलेख में उसकी विजय का गौरव प्रदर्शित करते हुए यह उल्लेख मिलता है कि उसने रेवती द्वीप और कलचुरियों के ऊपर विजय प्राप्त किया था।

Nerur grant (दानपत्र) और Mahakuta pillar Inscription के अनुसार कलचुरि वंश का राजा बुद्धराज बड़ा शक्तिशाली हो गया लेकिन उसको मंगलेश के सामने सर झुकाना पड़ा। बुद्धराज के अधीन गुजरात, खानदेश और मालवा के प्रदेश थे। बुद्धराज और मंगलेश के साथ बहुत दिनों तक युद्ध चलता रहा अन्त में मंगलेश विजयी हुआ और कलचुरि वंश से खानदेश और आस-पास के प्रदेश छीन लिए।

मंगलेश के नेरुर दानपत्र के अनुसार कोंकण में चालुक्य वंश के अधीन सामन्त स्वामिराज राज्य कर रहा था। इसने मंगलेश का विरोध किया फलस्वरूप मंगलेश ने उस पर आक्रमण करके उसे पराजित किया तथा मार डाला और उसके स्थान पर इन्द्रवर्मन को अपना सामन्त बनाया।

कुछ समय पश्चात् मंगलेश के राज्यकाल में गृह-कलह आरम्भ हो गई। इसका मुख्य कारण यह था कि मंगलेश ने अपने राज्यकाल में अपने पुत्र इन्द्रवर्मन को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। इस पर कीर्तिवर्मन प्रथम का पुत्र तथा मंगलेश का भतीजा पुलकेशीन द्वितीय क्रुद्ध हो गया तथा स्वयं राज्य प्राप्त करने की अभिलाषा से अपने चाचा मंगलेश पर आक्रमण कर दिया। इस गृह-युद्ध में मंगलेश मारा गया और पुलकेशिन II चालुक्य सिंहासन पर बैठा।

पुलकेशीन II

पुलकेशिन द्वितिय अपने चाचा मंगलेश की हत्या करके चालुक्य सिंहासन पर बैठा। उस समय उसके अधीन प्रान्त अपनी स्वाधीनता घोषित करने लगे तथा पड़ोसी राज्य उस पर आक्रमण करने की योजनायें बनाने लगे लेकिन पुलकेशिन इस पर तनिक भी विचलित न हुआ। वह अपने वंश का सबसे प्रतापी नरेश था। उस समय उसके चारो ओर शत्रु ही

शत्रु दिखायी पड़ने लगे Aihole inscription में इस प्रकार वर्णन मिलता है। "The whole world was enveloped in the darkness that was the enemies" वह अपने प्रतापी का परिचय देते हुए एक एक करके शत्रुओं को नष्ट किया और शत्रु रूपं अन्धकार में से प्रकाश को प्राप्त किया।

पुलकेशिन II ने बड़े धैर्य और योग्यता के साथ इस संकटपूर्ण परिस्थिति का सामना किया।

चलुक्य के प्रान्तीय शासक (गोविन्द और आप्पायिक से युद्ध) :—

सबसे पहले पुलकेशीन II ने अपने राज्य के बीजापुर क्षेत्र के निकटवर्ती प्रान्त के अप्पायिक (Appayika) और गोविन्द नामक दो राजाओं पर आक्रमण किया। क्योंकि इन दोनो राजाओं ने संघ बनाकर पुलकेशीन II के साम्राज्य पर आक्रमण करते हुए भीमरथी (भीमा) नदी तक आ पहुँचे थे। इस शक्ति को रोकने के लिये तथा राज्य की सुरक्षा के लिये पुलकेशीन ने इन से युद्ध किया, लेकिन दो राजाओं के संघ राज्यों को हराना कोई आसान कार्य नहीं था। साथ ही साथ उस समय पुलकेशीन की परिस्थिति अच्छी नहीं थी। इस कारण उसने 'भेद' नीति का अनुसरण करते हुये गोविन्द को अपनी ओर मिला लिया तथा गोविन्द को अप्पायिक की ओर से विमुख करके अपना मित्र बना लिया फलस्वरूप अप्पायिक कमजोर पड़ गये और पुलकेशीन ने उसको पराजित कर दिया। इस प्रकार पुलकेशीन विपत्ति से मुक्ति पा गये।

पुलकेशीन II ने अपने राज्य के प्रान्तों की स्थिति को सुदृढ़ तथा शान्त कर लेने के उपरान्त उसने अपना विजय अभियान प्रारम्भ किया। ऐहोल अभिलेख के प्रशस्तिकार रविकीर्ति ने उसकी विजयों की प्रशंसा बड़ी काव्यात्मक भाषा में किया है।

कदम्बो पर आक्रमण :—

पुलकेशीन II कदम्बवंश की राजधानी वनावसी पर आक्रमण किया और भयंकर युद्ध के पश्चात् उस पर अधिकार कर लिया। युद्ध का क्या कारण था इस विषय पर हम मत प्रकट करते हुए कह सकते हैं कि पुलकेशीन II के पिता कीर्तिवर्मन I ने कदम्बो को पराजित करके ध्वंस कर दिया था। लेकिन जब पुलकेशीन II गृह-युद्ध में व्यस्त था उस समय कदम्बो ने अपना सर पुनः उठाया। जिस कारण पुलकेशीन ने पुनः उसे पराजित कर दिया।

दक्षिण कनारा के आलुप और मैसूर के गंग पर विजय :—

पुलकेशीन II के विपक्ष में सम्भवतः यह दोनो राज्यो ने भी अपना सिर उठाया था। यह दो कदम्बो के मित्र थे और उन दोनो राज्यों से अधिक शक्तिशाली भी थे। जब दोनो राज्यों ने कदम्बो की पराजय का समाचार सुना तो उन्होंने अपना सिर उठाना उचित न समझा और पुलकेशीन II के आगे आत्म समर्पण कर देना पड़ा तथा उसकी अधीनता को स्वीकार किया। लेकिन अन्य विद्वानो का मत है कि पुलकेशीन II ने उन पर आक्रमण किया और दोनो को अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए विवश किया। Gadval Grant के अनुसार गंग नरेश दुर्विनीत ने अपनी एक पुत्री का विवाह पुलकेशीन II के साथ कर दिया।

अन्य राज्यों पर विजय :—

गंग, कदम्ब और आलुप पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् उसने उत्तरी कोंकण के मौर्यों की राजधानी पुरी पर आक्रमण किया और उन्हे अपने अधीन कर लिया। इस प्रकार उसने "पश्चिम सागर के गौरव" पुरी पर अधिकार करके जाटों, मालवों और गुर्जरों को अपने अधीन कर लिया। अब यह विचार करना है कि इन राजाओं ने इतनी सरलता से

पुलकेशीन की अधीनता को क्यो स्वीकार कर लिया। इसका मुख्य कारण उत्तर में हर्ष की बढ़ती हुई शक्ति से भयभीत होकर लाटों, मालवों और गुर्जरों ने पुलकेशीन II की अधीनता को स्वीकार कर लिया।

उत्तरापथ सम्राट हर्ष पर विजय :—

सम्पूर्ण भारत में एक छत्र राज्य स्थापित करने के लिए हर्ष और पुलकेशीन II में भयंकर प्रतियोगिता चल रही थी अन्त में दोनो शक्तियों का सामना हो गया। युद्ध का कारण पश्चिमी भारत से प्रस्तुत होता है। हर्ष इस प्रदेश को जीतना चाहता था और इस प्रदेश में स्थित वल्लभी राज्य के राजा ध्रवसेन पर हर्ष ने आक्रमण कर दिया। ध्रुवसेन भयभीत होकर गुर्जर नरेश दद्द II Dadda II के राज्य में शरण ली। दद्द II पुलकेशीन के अधीन था क्योंकि गुर्जर नरेश ने पहले से ही पुलकेशीन II की अधीनता को स्वीकार कर लिया था। इस प्रकार दद्द II ने पुलकेशीन II को प्रोत्साहित किया हर्ष के विरुद्ध। फलस्वरूप इस प्रदेश के अन्य वंशों लाटों मालवों गुर्जरों ने पुलकेशीन का साथ दिया और हर्ष के विरुद्ध पश्चिमी भारत में एक भयंकर और सबल गुट बन गया। इधर हर्ष ने भी एक विशाल सेना लेकर पुलकेशीन II के साथ युद्ध करने के लिये आगे बढ़ा। Dr. Smith के अनुसार यह भयंकर युद्ध अन्ततोगत्वा रेवा (नर्मदा) नदी के तट पर हुआ। स्वयं, 'सकलोत्तरापथ' हर्ष ने अपनी सेना का संचालन किया था परन्तु 'दक्षिणापथ नाथ' की रणदक्षता उससे कहीं अधिक कुशल प्रमाणित हुई। पुलकेशीन II की इस विजय का उल्लेख ऐहोल अभिलेख में इन शब्दों में किया गया है। "जिसके पदारबिन्द अपरिमित विभूतिवाले सामन्तो की सेना मुकुट मणियों की किरणों से आक्रान्त रहते थे वही हर्ष अब उस (पुलकेशिन) के द्वारा भयातुर हो हर्षरहित हो गया, रण में मारी गई अपनी गजेन्द्र सेना को देख श्रीहत हो गया।"

"अपरिमित विभूतिस्फीतसामन्तसेना मुकुटमणि मयूखाक्रान्तपादारविन्दः।
युधिपतितगजेन्द्रानीकवीभत्सभूतो भयविगलितहर्षो येन चाकारि हर्षः ॥"

पुलकेशीन II के लेख से अनुमान लगता है कि हर्ष का हाथी भयंकर युद्ध को देखकर भय से रणक्षेत्र में गिर पड़ा था। Hiuen Tsang के अनुसार हर्ष की हार हुई थी। हर्ष स्वयं कहता है कि "has gathered troops from the five Indies, and summoned the best leaders from all countries, and himself gone at the head of his army to punish and subdue these people, but he has not yet conquered their troops" उसकी प्रख्यात ऐहोल मेगुटी की प्रशस्ति में लिखा है कि इन विजयों के फलस्वरुप पुलकेशिन II ९९ ग्रामो वाले तीनो महाराष्ट्रों का प्रश्नातीत स्वामी हो गया।

पुलकेशीन II ने पूर्वी दक्षिणापथ में भी अपनी सत्ता का विस्तार किया। ऐहोल अभिलेख से प्रतीत होता है कि उसने कोशल और कलिङ्ग का दमन किया। Allahabad Pillar Inscription के अनुसार उसने पिष्टपुर नरेश को पराजित करके उसके स्थान पर अपने भाई विष्णुवर्धन को राजा नियुक्त किया। इसी विष्णुवर्धन से पूर्वी चालुक्य-वंश की स्थापना हुई। यह वंश करीब 1070 AD तक राज्य करता रहा।

पल्लव वंश के महेन्द्रवर्मन I पर आक्रमण :

पल्लव वंश का महान् शासक महेन्द्रवर्मन का राज्य उत्तर में कृष्णा नदी तक फैला था। वह अपनी योग्यता, विद्वत्ता और कला प्रेम के लिए प्रसिद्ध था। दूसरी ओर पुलकेशीन II उसी की भाँति कलानुरागी तथा संस्कृति सम्पोषक थे। चलुक्य सम्राट पुलकेशीन II की धाक सम्पूर्ण दक्षिणापथ पर जमी हुई थी।

पल्लव नरेश महेन्द्रवर्मन और चालुक्य नरेश पुलकेशीन II एक ही समय में अपनी अपनी शक्ति को बढ़ा रहे थे। पल्लवों की बढ़ती हुई शक्ति का दमन करने के लिए पुलकेशीन II ने महेन्द्रवर्मन I पर आक्रमण किया जिससे महेन्द्रवर्मन को पुलकेशीन II से युद्ध करना पड़ा। पल्लवो

और चालुक्यों में भयंकर और दीर्घकालिन संघर्ष छिड़ गया। ऐहोल अभिलेख में पुलकेशीन का वक्तव्य है कि उसने "उसकी शक्ति के उत्कर्ष के विरोधी पल्लवनाथ को" परास्त कर दिया और "अपनी सेनाओं द्वारा उठायी धूल से ढकी काञ्चीपुर के प्राचीरो के पीछे अपना विक्रम छिपाने को" बाध्य किया। पुलकेशिन II ने अपने शत्रु से वेंगी का प्रान्त छीन लिया और वहाँ का शासक अपने भाई विष्णुवर्धन को बना दिया। पुलकेशीन II ने पल्लव राज्य के उत्तर प्रदेशों पर अधिकार करके कांची पर आक्रमण किया किन्तु पुलकेशीन II पल्लव राजधानी कांची पर अधिकार न कर सका।

नरसिंहवर्मन प्रथम पर आक्रमण :—

पल्लव वंश का महान शासक नरसिंह वर्मन I अपने पिता महेन्द्र-वर्मन I के स्थान पर विराजमान हुआ। उसके समय में भी पुलकेशीन II ने Kanchi पर आक्रमण किया लेकिन इस बार पुलकेशीन II को पराजित होना पड़ा था और यहीं उसका गर्व चूर्ण हो गया। यह उसकी प्रथम पराजय थी। इस पराजय के कारण उसका अन्त सुखद नही हुआ। धीरे धीरे उसकी शक्ति का ह्रास होने लगा। पल्लव नरेश नरसिंह वर्मन I ने वातापी पर आक्रमण कर दिया और पुलकेशीन II को युद्ध में मार डाला। पुलकेशीन जैसे वीर और महान शासक के ऊपर विजय प्राप्त करने के पश्चात नरसिंहवर्मन I ने वातापीकोंड की उपाधि धारण किया।

पुलकेशीन II का शासन काल युद्ध में ही व्यतीत हुआ। वह एक महान योद्धा होने के नाते उसने सम्पूर्ण भारत के भूभाग को अपने अधीन कर लिया। उसके शासन काल के आरम्भ से ही युद्ध होता रहा लेकिन वह विजयी होता गया। और एक महान शासक होने के कारण उसको भारतवर्ष के महान विजेताओं में गिना जाता है। Dr. D.C. Sircar के अनुसार :-"Pulkeshin II was undoubtedly the

greatest King of the chalukya house of Badami and one of the greatest monarch of Ancient India".

राजनीतिक के रूप में :—

पुलकेशिन II की विजय कुशलता को देखकर हम कह सकते हैं कि वह युद्ध नीति में पूर्ण रूप से निपुण था। उसने कुशल युद्ध नीति के द्वारा सम्पूर्ण भारत के भूभाग को जीत लिया था। इसके अलावा राजनीति में भी वह पूर्णतः दक्ष था। पुलकेशीन II के सुविशाल साम्राज्य की सीमाये काफी दूर तक विस्तृत थी। उत्तर में विन्ध्य पर्वत-श्रेणी और महानदी तक, दक्षिण में मैसूर तक फैला था। इन प्रदेशो का शासन सामन्तो के सुपुर्द में था। इनसे वार्षिक कर मिलता था। लेकिन वे सम्राट की आज्ञा से शासन करते थे। युद्ध के समय सब एकत्र होकर सम्राट की सहायता करते थे। सम्पूर्ण साम्राज्य पाँच प्रान्तो में विभक्त था और प्रत्येक प्रान्त का शासन वाइसराय करता था।

१ वेंगी का प्रान्तीय शासक विष्णुवर्द्धन था।
२ कन्नड़ प्रदेश के दक्षिण प्रान्त का शासक आदियत्वर्मन था।
३ कोंकण का प्राचीन राज्य जो पश्चिमी समुद्र तट के निकट था। इसका शासक पुलकेशीन का ज्येष्ट पुत्र चन्द्रादित्य था।
४ गुजरात और उत्तरी भाग जिसकी राजधानी नासिक मे थी। इसका शासक पुलकेशिन II का दूसरा पुत्र जयसिंह था।
५ महाराष्ट्र, बरार, हैदराबाद तथा बम्बई के कुछ भागो को सम्मिलित कर के एक प्रान्त बनाया जिस में पुलकेशीन स्वंय शासन करता था।

इस प्रकार से उसका शासन व्यवस्था एक उच्च कोटि का था और सुचारू रूप से संचालित होता था। इसका मुख्य कारण यह था कि उन्होंने अपने राज्य के प्रान्तो मे अपने वशं के लोगों को ही नियुक्त

किया था। जिससे किसी प्रकार का विश्वासघात का प्रश्न न उठता था। साथ ही कर ठीक समय मे वसूल हो जाता था। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि शासन व्यवस्था के दृष्टि कोण से भी वह एक कुशल शासक था।

विदेशियो से सम्बन्ध :—

उसने दूर दूर तक भी अपनी शक्ति का परिचय दिया। उसने विदेशियो से सम्बन्ध स्थापित किया। अरब लेखक Tabari के अनुसार उसने ईरान अथवा फारस के राजा खुसरो द्वितीय के साथ मैत्री स्थापित की और उनके पास उसने एक पत्र और कुछ भेंट देकर अपने दूत भेजे। इससे राजा खुसरो पुलकेशीन II से अत्याधिक खुश होकर उसके बदले में खुसरो ने भी अपना अभिनन्दन प्रकट करते हुए अपना एक राजदूत पुलकेशीन II के दरबार में भेजा। कुछ विद्वानो का मत है कि अजन्ता के एक चित्र में पुलकेशीन II फारस के राजदूत का स्वागत करते हुए प्रर्दशित किया गया है।

पुलकेशिन II के साथ चीन यात्री की भेंट :— Pu-Lo-Ki-She

पुलकेशिन II के अन्तिम शासन काल मे चीनी यात्री ह्वेनसांग ने उसके साथ भेट की थी। चीनी यात्री ने उसके व्यक्तिगत जीवन का वर्णन करते हुए कहते हैं कि वह क्षत्रिय था, दानी था। उसके विचार विशाल थे। साथ ही गंभीर भी था। प्रजा उसकी भक्ति और सेवा करती थी साथ सहर्ष उसकी आज्ञा पालन करती थी।

चीनी यात्री ने उसके राज्य का भ्रमण किया और उसका भी वृहद वर्णन करते हुए कहते है कि सम्पूर्ण मो-हो-ला-चो (महाराष्ट्र) राज्य कि परधि 5000 Li (about 836 Miles) और राजधानी (वातापी), 30 Li (about 5 Miles) इसके पश्चिम में एक विशाल नदी है। इस नदी के पानी से उपज खूब होती थी मिट्टी अच्छी थी। नियमित रूप से जोती जाती थी।

यात्री ने वहाँ के लोगों के बारे मे भी वर्णन करते हुऐ कहते हैं कि लोग स्वभावतः जीवन में रहकर इमानदार थे। वे कद में लम्बे और वे युद्ध प्रिय होते थे। शत्रु से बदला लेना नही भूलते थे तथा कर्त्तव्य प्रारायण होते थे। मेहनती होते थे। वे विद्या प्रेमी भी थे। युद्ध मे उनके नेता मद्य से मदमत्त होकर सैन्य का संचालन करते थे और युद्ध के पहले उनके हाथियों को भी सुरा पिलाकर मदमत्त कर दिया जाता था।

642—655 (कोई भी एकच्छत्र राजा न था)

पुलकेशिन II के मृत्यु के बाद चालुक्य सिंहासन कुछ समय के लिए रिक्त रहा। क्योकि उस समय कोई भी ऐसा शासक न रहा जो कि सिंहासन पर बैठे और पल्लव नरेश नरसिंह वर्मन के साथ युद्ध करे। उस समय नरसिंहवर्मन I वहुत ही शक्तिशाली नरेश सिद्ध हुआ था क्योकि पुलकेशीन II जैसा नरेश को पराजित करके उसे मार डालना कोई आसान काम नहीं था। अब प्रश्न यह उठता है कि पुलकेशीन के बाद उसका पुत्र सिंहासन के उत्तराधिकार के लिए क्यो नहीं अपने को घोषित किया तथा उस राज्य के प्रान्तियों शासको ने भी क्यो नहीं सिंहासन के अधिकारी वनने की इच्छा प्रकट की। इसका एक मात्र कारण यह हो सकता है कि कोई भी प्रान्तीय शासक पल्लव वंश के नरेश नरसिंहवर्मन से युद्ध करना नहीं चाहता था। इस कारण यह राज्य कुछ समय तक खाली रहा। अन्त में विक्रमादित्य I ने अपने नाना गंग नरेश दुर्विनीत की सहायता से नरसिंहवर्मन से युद्ध किया और उसे पराजित करके अपनी राजधानी वातापी का उद्धार किया।

कुछ विद्वानो का मत है कि सिंहासन के उत्तराधिकार के हेतु प्रान्तीय शासको के आपस में युद्ध छिड़ गया और अन्त में विक्रमादित्य सिंहासन पर आसीन हुआ। उसने नरसिंहवर्मन को पराजित किया।

विक्रमादित्य प्रथम

कुछ वर्ष तक चालुक्य सिंहासन रिक्त रहने के पश्चात पुलकेशिन II का पुत्र सिंहासन पर बैठा। उस समय चालुक्य राज्य की स्थिति अच्छी नहीं थी! विक्रमादित्य I को सत्याश्रय भी कहते थे। तेरह वर्ष तक पराधीनता में रहने के कारण चालुक्यो का राज्य विभिन्न भागों में बट गया। किन्तु शीघ्र ही पुलकेशिन II का सुयोग्य पुत्र विक्रमादित्य I ने पराधीनता के बंधन की बेड़ी तोड़ कर अपने वंश के गौरव को फिर से प्रतिष्ठित किया।

Ganga Inscription के अनुसार विक्रमादित्य I को पहले अपने भाइयों के साथ युद्ध करना पड़ा जो प्रान्तीय शासक था। फिर अपने नाना गंग नरेश दुर्विनीत की सहायता से पल्लव नरेश नरसिंहवर्मन I से युद्ध करके चालुक्य राज्यो को मुक्त किया। जिस समय विक्रमादित्य I अपने भाईयो से तथा पल्लव नरेश नरसिंह वर्मन I से युद्ध कर रहा था उस समय उसका एक छोटा भाई जयसिंहवर्मन ने उसकी सहायता की थी। इससे विक्रमादित्य अत्याधिक खुश होकर अपने छोटे भाई को लाट का गर्वनर नियुक्त कर दिया। जयसिंहवर्मन बहुत ही वीर व्यक्ति था। उसने बल्लभ नरेश शीलादित्य तृतीय से युद्ध किया तथा उसे युद्ध में पराजित कर दिया।

विक्रमादित्य ने अपने योग्यता के बल पर सम्पूर्ण बदामी चालुक्य पर अधिकार कर लिया था। साथ ही साथ रणरसिक, श्रीपृथ्वीवल्लभ, भट्टारक और महाराजाधिराज, परमेश्वर आदि की उपाधियाँ धारण कर लिया था।

Pallava से युद्ध :– Talamanchi grant दान पत्र के आधार पर हम कह सकते हैं कि विक्रमादित्य I ने अपने राज्य के दक्षिण मार्ग को पल्लवो के हाथ से स्वतंत्र किया जो कि नरसिंहवर्मन ने अपने अधीन कर रखा था।

Hyderabad :—दान पत्र के अनुसार विक्रमादित्य I ने पल्लव राज्य के प्रधान तीन नरेश के साथ युद्ध किया जिसमें तीनो पल्लव नरेशों को विक्रमादित्य I से हार खानी पड़ी।

Gadval दानपत्र में विक्रमादित्य I को पल्लव वंश का विनाशक कहा गया है। पहले इसने नरसिंहवर्मन पर विजय प्राप्त करने के पश्चात उसने महेन्द्रवर्मन द्वितीय पर आक्रमण किया और उसे पराजित करके फिर परमेश्वरवर्मन I पर आक्रमण किया किन्तु विजय किसके पक्ष में रही यह विवाद ग्रस्त प्रश्न है। Gadval plates के अनुसार परमेश्वरवर्मन I को विक्रमादित्य I के सामने झुकना पड़ा था। किन्तु Kuram plates of Paramesvara Varman I का वक्तव्य है कि परमेश्वरवर्मन I ने विक्रमादित्य की सेना को युद्ध में मार भगाया। Honnur दानपत्र के अनुसार विक्रमादित्य ने Kanchi के पश्चिम मे Malliyurgrama में अपना पड़ाव डाला था।

According to R. Gopalan, "The details of the Pallava-Chalukya compaign are not clearly known from any records, but it is certain that success did not uniformly attend on Chalukya invader". लेकिन इतना निश्चित है कि विक्रमादित्य I ने परमेश्वर वर्मन I को अवश्य ही पराजित किया था। चाहे उसे पहले क्यों ना परमेश्वरवर्मन से हार खानी पड़ी थी। यह संम्भव हो सकता है कि पहले परमेश्वरवर्मन I की विजय हुई और अन्त में विक्रमादित्य I ने शक्ति संचय करके विजय का गौरव हासिल किया।

कुछ विद्वानों का मत है कि पहले विक्रमादित्य I को परमेश्वरवर्मन से हार खानी पड़ी इससे उसके विरुद्ध तथा उससे बदला लेने के लिए तथा अपनी शक्ति को दृढ करने के लिए विक्रमादित्य I ने अपने सम-कालीन पाण्डय नरेश अरिकेसरी परांकुश मारवर्मन I से मित्रता कर

ली। दोंनो मिलकर पल्लव नरेश परमेश्वरवर्मन I पर आक्रमण करके उसको पेरुवलनल्लूर के युद्ध में पराजित कर दिया। उसने कई विरुद धारण किए थे Gadval grant में "राजमल्ल" का भी उल्लेख मिलता है जिसने महमल्ल वंश अर्थात नरसिंहवर्मन I का विनाश करने के कारण यह उपाधि धारण [illegible]था। The Gadval Grant describes him as the destroyer of the family of Mahamalla (i. e. Narasimha-Varman I) and of the Pallava lineage.

विक्रमादित्य I ने पल्लव की बड़ी शक्ति को विजय करने के पश्चात उसने सुदूर दक्षिण तक अपना विजय पताका फहराया जिसमें चोल, पाण्डय और केरल राज्यो को अपने अधीन कर लिया। इस प्रकार यह कहा जाता है कि वह सम्पूर्ण पृथ्वी का स्वामी बन बैठा जो कि तीनों समुद्र से घिरा हुआ था। जोकि दक्षिण भारत Bay of Bengal, Arabian Sea और Indian Ocean के बीच में था। विक्रमादित्य I ने 655 से 681 तक सफलता पूर्वक राज्य किया।

विनयादित्य

विक्रमादित्य I के मृत्यु के उपरान्त उसका पुत्र विनयादित्य चालुक्य सिंहासन पर बैठा। यह भी एक वीर तथा विजयता था। इसने अपने पिता के राज्यकाल में अपने को एक योग्य पुत्र सिद्ध कर दिया था। इसी कारण अपने पिता के मृत्यु के चार वर्ष पहले ही उसको राज्य का अधिकारी बना दिया था। कुछ अभिलेखों से बोध होता है कि जिस समय उसका पिता पल्लवो, चोलो, पाण्डयो और केरल से युद्ध कर रहा था, उस संकट काल में इसने अपने पिता को युद्धों में सहयोग दिया जिससे विक्रमादित्य खुश होकर उसे राज्य का अधिकारी बना दिया। उसने भी अपने पिता की तरह पल्लवों, कलभ्रों, केरलों, हैहयों, विलों, मालवों,

चोलों,पाण्डयों, आलुपों, गंगों आदि राज्यों पर विजय किया। उसके समय में बाहरी देशों से भी उनका सम्पर्क था। कुछ अभिलेखो से प्रतीत होता है कि उसने कमेर (कावेरी घाटी), पारसीक (फारस) और सिंघल के राजाओ से कर वसूल किया था। इससे अनुमान लगता है कि विनयादित्य ने इन भागो पर भी अपना प्रभाव स्थापित किया था और यह भी सम्भव हो सकता है कि उन देशों से लोग व्यापार करने आते थे। इसलिए उनसे कर लेते थे। एक अभिलेख में वर्णित है कि विनयादित्य ने उत्तरी भारत पर आक्रमण करके 'सकलोत्तरापथनाथ' को पराजित कर 'सार्वभौम पद' प्राप्त किया। इसमें सन्देह नहीं कि वक्तव्य अतिरंजित है क्योंकि उत्तरापथ में इस काल कोई साम्राज्य शक्ति प्रतिष्ठित न थी, यद्यपि जान पड़ता है कि विनयादित्य ने उत्तर कालीन गुप्त कुल के आदित्यसेन जो परम 'भट्टारक 'महाराजाधिराज' की उपाधि धारण की थी और उसके एक उत्तराधिकारी को परास्त किया था। लेकिन इस युद्ध में विनयादित्य के पुत्र बिजयादित्य को शत्रु ने बन्दी बना लिया परन्तु कुछ समय पश्चात उसने स्वयं शत्रु से छुटकारा प्राप्त कर लिया।

विनयादित्य ने श्री पृथ्वीवल्लभ सत्याश्रय और राजाश्रय, की उपाधियाँ धारण की थी।

विजयादित्य

विनयादित्य के बाद उसका पुत्र विजयादित्य चालुक्य सिंहासन परबैठा इसका शासन दीर्घकाल तक चलता रहा। इसने कुल मिला कर सत्रह वर्ष तक राज्य किया जो कि अपने वंश के कोई भी राजाओं ने इतने समय तक राज्य नहीं किया। उसके राज्य में शान्तिपूर्ण वातावरण रहा जिस कारण वह इतने काल तक शान्तिपूर्ण राज्य करता रहा। Ulchala Stone Insrciption के अनुसार इसके समय में इसके पुत्र विक्रमादित्य द्वितीय ने कांची पर आक्रमण किया और पल्लव राजा परमेश्वरवर्मन द्वितीय को

पराजित करके उसको कर देने को विवश किया। विजयादित्य के शासनकाल में उसका एक गवर्नर जयाश्रय मंगलराज लाट में शासन कर रहा था।

उसका राज्यकाल शान्तिपूर्ण वातावरण रहने के कारण कला और धर्म को प्रोत्साहन मिला उसने अपने राज्य काल में बीजापुर जिले में पट्टडकल नामक स्थान पर शिव का एक अति सुन्दर मन्दिर निर्मित कराया जो कि Vijayesvara Sangamesvara के नाम से पुकारा जाता है। वह जैन धर्म का मतालम्वी था। उसने जैन धर्म को बहुत प्रोत्साहन दिया। उसने अनेक गाँव जैन पंडितों को दान में दिया। विजयादित्य की छोटी वहन कुंकुम महादेवी ने लक्ष्मीश्वर में एक जैन मन्दिर बनवाया जो कि Anesejjeya-basadi के नाम से पुकारा जाता है। उसके समय में जैन धर्म की खूब उन्नति हुई। मन्दिरों को देखने से अनुमान लगता है कि कला में लोगों की रुचि था जो कि कला की दृष्टीकोण से बहुत ही सुन्दर था।

विक्रमादित्य II

चालुक्य वंश का प्रतापी और कला प्रेमी शासक विक्रमादित्य द्वितीय अपने पिता विजयादित्य के पश्चात सिंहासन पर वैठा। उसने अपने पिता के शासन काल में अनेक युद्ध किया था और अपने पिता को भी युद्ध में सहायता दिया था। फलस्वरूप उसके शासन काल में जो भी आक्रमण हुआ उसमें उसने सफलता प्राप्त किया क्योंकि वह पहले से ही युद्ध कला में दक्ष था। कीर्तिवर्मन द्वितीय के ताम्रपत्रों में विक्रमादित्य द्वितीय की सैनिक कुशलता तथा सफलताओं का वृशद वर्णन किया गया है।

पल्लवों से युद्ध :—

पल्लवो और चालुक्यों का पुराना वैर चलता आ रहा था। उसने भी पल्लव राजधानी कांची पर आक्रमण किया। इस समय पल्लव राज्य

में नन्दिवर्मन द्वितीय शासन कर रहा था। यह भी पल्लव वंश का प्रतापी राजा था।

विक्रमादित्य द्वितीय के Kendur plates के अनुसार चालुक्य शासक विक्रमादित्य द्वितीय ने पल्लव नरेश नन्दिवर्मन पर आक्रमण किया और कुछ दिनों तक कांची को अपने अधिकार में रखा। लेकिन यह सफलता बहुत दिन तक न रही इसका कारण यह है कि जिस समय पल्लव नरेश परमेश्वर वर्मन द्वितीय की मत्यु हो गई तो पल्लव वंश में गृह कलह आरम्भ हो गया था। उस समय नन्दिवर्मन अच्छी परिस्थिति में न था जिस कारण वह हार गया। विक्रमादित्य द्वितीय कांची में प्रवेश किया किन्तु वहाँ कुछ अनिष्ट नहीं किया बल्कि विक्रमादित्य द्वितीय ने वहाँ की जनता एवं मन्दिरों में प्रभूत सम्पत्ति का वितरण करके अपने राज्य में वापस चले गये। उसके विजय और दान का वर्णन विक्रमादित्य द्वितीय के Kanarese inscription में मिलाती है जो कि राजसिंहेश्वर मंदिर के एक मंडप के स्तम्भ पर खुदे हुये हैं जिसके आधार पर यह वर्णन है कि विक्रमादित्य द्वितीय ने कांची पर अधिकार करके राजसिंहेश्वर तथा अन्य मन्दिरों को सुवर्ण ढेरों से सुसज्जित कर दिया था और इस लेख के आधार पर यह अनुमान लगता है कि उसने पल्लव वासियों को अनेक दान दिया था। Kailasanatha Temple में विक्रमादित्य के लेख से भी इस बात का प्रमाण मिलता है कि उसने राजसिंहेश्वर मन्दिर से सर्वस्व हरण नहीं किया था बल्कि उस मन्दिर के लिए कुछ स्वर्ण दान दिया था। इसका अभिप्राय Vakkaleri plates से भी होता है। नन्दिवर्मन द्वितीय इस पराजय और अपमान को सहन न कर सका और उसने शीघ्र ही अपनी परिस्थिति सँभाल लिया तथा शक्ति संचय करके चालुक्यों पर आक्रमण किया इस विषय पर मतभेद है कुछ विद्वान कहते हैं कि नन्दिवर्मन ने आक्रमण नहीं किया। अब प्रश्न यह उठता है कि विक्रमादित्य क्यों विजित देश पर पुनः युद्ध करने के लिये अपने पुत्र कीर्तिवर्मन को भेजा। यह

सम्भव हो सकता है कि जिस समय विक्रमादित्य द्वितीय पल्लव देश में दान आदि करके अपने राज्य में वापस आया तो नन्दिवर्मन द्वितीय ने पुनः अपना सिर उठाया इसलिये विक्रमादित्य द्वितीय पुनः उसे दमन करने के लिए कीर्तिवर्मन को भेजा। नन्दिवर्मन ने कीर्तिवर्मन को रोका लेकिन विजय कीर्तिवर्मन के हाथ में रही। Kendur plates के अनुसार कीर्तिवर्मन के विजय प्राप्त करने के पश्चात विक्रमादित्य द्वितीय बहुसंख्यक हाथी, सोना और प्रचुर सम्पत्ति लेकर अपने राज्य में वापस आया।

अरबों से युद्ध:—

विक्रमादित्य द्वितीय को अपने राज्य काल में अरबों से भी युद्ध करना पड़ा जिस समय विक्रमादित्य द्वितीय अपने अन्य युद्धों में व्यस्त था उसी समय अरबों ने सिन्ध और उसके आस पास के प्रदेश पर अपना अधिकार करके आगे बढ़ते हुये चले आ रहे थे। कुछ समय पश्चात उन्होंने दक्षिणी भारत की ओर भी अपना राज्य विस्तार करना चाहा लेकिन उस समय वहाँ उनकी एक भी न चली। जब विक्रमादित्य को यह समचार प्राप्त हुआ तो उसने अपने सामन्तों शासक Avanijanasraya Pulakesin और राष्ट्रकूट दन्तिवर्मन की सहायता से अरबों से आक्रमण किया और अरबों को बुरी तरह से पराजित करके खदेड़ दिया। उसका यह कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण था और उसने दक्षिण को अरबों के हाथ से बचा लिया।

चोल से युद्ध :—

इस युद्ध के पश्चात विक्रमादित्य द्वितीय ने चोल राज्य पर आक्रमण करके भयत्रस्त कर दिया। इस समय चोल राज्य का पतन काल था क्योंकि उस समय चोल राज्य में कोई भी शक्तिशाली नरेश का जन्म नहीं हुआ था और चोल राज्य एक गौण वंश के रूप में ही रहा होगा क्योंकि ह्वेनसाँग

ने उस समय चोलों का उल्लेख करते हैं किन्तु किसी राजा का नाम उल्लेख नहीं करता है। इस कारण यह राज्य कुछ समय तक विक्रमादित्य द्वितीय के आधीन में रहा।

पांड्यो से युद्ध :—

विक्रमादित्य ने चोल राज्य पर विजय करके पांड्यों पर आक्रमण किया और अपने आधीन कर लिया संभवत इस समय पांड्य के शासक राजसिंह प्रथम राज्य कर रहा था। यह भी शक्तिशाली नरेश था। इसने अपने राज्य काल में पल्लव नरेश नन्दिवर्मन द्वितीय से युद्ध किया और चालुक्य नरेश विक्रमादित्य द्वितीय का भी सामना किया किन्तु विक्रमादित्य को अधीनता स्वीकार करना पड़ा।

इन दो राज्यों के अलावा विक्रमादित्य ने केरलों और कलभ्रों का भी दमन किया और अपने आधीन कर लिया।

विक्रमादित्य एक धार्मिक व्यक्ति था। उसके राज्य में अनेक शिव मन्दिर का निर्माण हुआ जो कि शैव धर्म से सम्बन्धित था जिस से अनुमान लगता है कि वह शैव धर्मावलम्बी था। विक्रमादित्य के प्रधान पत्नी महादेवी भी एक धार्मिक स्त्री थी जो कि हैहय कुल की थी। उसने एक शिव मन्दिर का निर्माण किया जो Lokesvara से प्रसिद्ध था। आज कल उसको Virupaksha के नाम से पुकारा जाता है। विक्रमादित्य द्वितीय की छोटी पत्नी Rajni थी जिसको Trailokyamahadevi के नाम से पुकारा जाता है। यह Mahadevi की छोटी बहन थी। इसने भी एक शिव मन्दिर निर्माण किया जोकि Trailokyesvara के नाम से परिचित था।

विक्रमादित्य द्वितीय एक दानशील व्यक्ति भी था। उसका दान का परिचय Vakkaleri plates में उल्लखित है। वह ब्राह्मणों को दान देने के लिए भी प्रसिद्ध था।

कीर्तिवर्मन II

विक्रमादित्य द्वितीय के पश्चात उसका पुत्र कीर्तिवर्मन सिंहासन पर बैठा। इसने अपने पिता के युद्धों में भाग लिया था। उसने अपने पूर्व-गामियो की ही भाँति पल्लवो से लोहा लिया। उसने राष्ट्रकूट नरेश कृष्णा प्रथम के साथ भी युद्ध किया। लेकिन कृष्णा प्रथम ने उसे पराजित कर दिया। पाण्डय नरेश मारवर्मन राजसिंह प्रथम ने वेणवई के युद्ध में कीर्तिवर्मन को पराजित कर दिया। इस प्रकार चालुक्य राजकुल की मूल शाखा लुप्त हो गई।

राष्ट्रकूट

उत्पत्ति:— राष्ट्रकूटों की उत्पत्ति का प्रश्न बहुत ही जटिल है। इस प्रश्न को हल करने के लिए बहुत से सिद्धान्तो ने मत प्रकट किया है।

(१) राष्ट्रकूट लेखो के अनुसार यदुवंशीय कहा गया है लेकिन यह लेख प्रारम्भ के लेखो में नहीं है। इस लिए यह केवल कल्पना मात्र है। लेकिन इस बंश का एक राजा गोविन्द तृतिय की तुलना यदुवंशीय श्रीकृष्ण से की गई है। इससे अनुमान लगता है कि वह (गोविन्द तृतीय) स्वंय यदुवंशीय न था।

(२) Rashtra kuta का अर्थ है। "Head of a Rashtra" (District) क्योंकि Gramakuta का शब्द अर्थ "The headman of a village" तो हम Rashtra का अर्थ District से मानते हैं और Kuta का अर्थ head से लगते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि चालुक्यों के राज्य काल में यह लोग किसी प्रान्त में राज्य कर रहे थे। जब बदामी चालुक्यों का अन्त हो गया तो राष्ट्रकूटों का उदय हुआ।

(३) बर्नोल महोदय के अनुसार राष्ट्रकूट आंध्र देश की आधुनिक द्राविड़ जाति रेड्डि से सम्बन्धित थे। वे तेलगू थे। किन्तु यह असम्भव है। यदि यह लोग आन्ध्र देश के होते तो उनका उदय और उत्कर्ष आन्ध्रदेश में होता।

(४) सर, आर, जी, भण्डारकर के अनुसार राष्ट्रकूट तुंग नामक राजा के सामन्त थे। कर्हद और देवली ताम्रपत्रों में राजा कृष्ण तृतीय को तुङ्ग राजा से उत्पन्न बताया हैं। लेकिन तुङ्ग नामक राजा का नाम किसी भी इतिहास में उल्लेख नहीं है। इसलिए यह मत स्वीकार नहीं कर सकते।

(५) फ्लीट महोदय ने इनका सम्बन्ध उत्तरी भारत के राठौरों से किया किन्तु राठौरों की उत्पत्ति राष्ट्रकूटो के बाद में हुई है। इसलिय यह मत भी ठीक नहीं बोध होता है।

(६) श्री, सी, वी, वैद्य राष्ट्रकूटों को मराठों का पूर्वज मानते हैं किन्तु उनकी भाषा मराठी नहीं थी ।

(७) ऊपर के मतों से हम सहमत नहीं हो सकते हैं लेकिन डा०, अल्टेकर का मत कुछ उपयुक्त हैं । वह राष्ट्रकूटों को राठकों की सन्तान मानते हैं । अशोक के अभिलेखों मे रठिकों का उल्लेख हुआ है । नानाघाट अभिलेख में रठिकों को महारठी कहा गया है । अनुमान लगता है कि इस जाति के लोग महाराष्ट्र और कर्नाटक के प्रदेशों में बहुत दिनों तक सामन्तों के रूप मे शासन करते थे ।

दन्तिवर्मन, गोविन्द प्रथम कंक प्रथम इस राजकुल के कुछ प्रारम्भिक राजा थे । इनका इतिहास का ज्ञान अल्प है ।

Genealogy of the Rashtrakuta
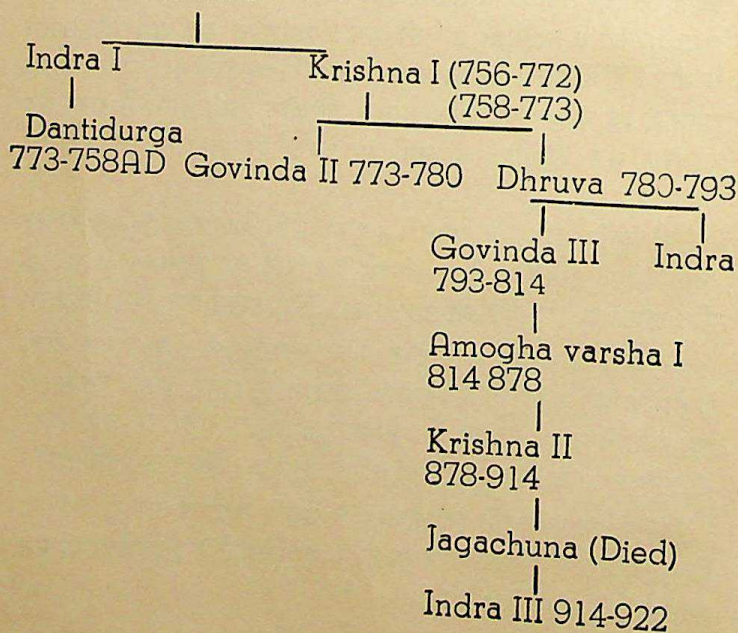
राष्ट्रकूट शासक हैदराबाद के उसमानाबाद या वेदर जिले के लट्टूर या लाट्टूर नामक स्थान के निवासी थे जो कि 625 A. D. मे बरार में इलिचपुर नामक स्थान पर चले आये और यहाँ उन्होने चालुक्यो को पराजित करके एक छोटा सा साम्राज्य स्थपित कर लिया प्रारम्भ मे यह चालुक्यो के सामन्त थे।

इन्द्र I

इस वंश का उत्थान दन्तिदुर्ग के पिता इन्द्र प्रथम के समय से हुआ था जिसने की एक चालुक्य राज कुमारी भवनागा से विवाह किया। कहा जाता है कि इन्द्र प्रथम ने भवनागा को विवाह अनुष्ठान के बीच ही शक्तिपूर्वक ले भागा था। यह Mangalarasa या Pulakesin की पुत्री थी। इसका अभिप्राय संजन ताम्रपत्रो से होता है। कवि ताम्रपत्रो से बोध होता है कि यह गुर्जर चालुक्य नरेश मंगलरस के सामन्त थे।

इस वंश का पहला संस्थापक इन्द्र प्रथम था। उसने अपने बल से इस बंश की सत्ता सुदृढ़ किया उसके समय से ही राष्ट्रकूटों का गौरव पराकाष्ठ पर पहुच गया था।

दन्तिदुर्ग

अपने पिता इन्द्र की मृत्यु के पश्चात ७४५ ए. डी. में २२ वर्ष की अवस्था में राज गद्दी पर बैठा। दन्तिदुर्ग के राज्य काल की घटनायें जानने के लिए Samangad plates और Ellora Dasavatara cave inscription बहुत ही लाभदायक साधन है। इसके आधार पर Kanchi, Kalings, Sri-Saila, Kosala, Malava, Lata, Tanka और Sindh के शासको के साथ युद्ध का वर्णन और दन्ति-दुर्ग के द्वारा उन सब राजाओ को परास्त करने का उल्लेख मिलता है।

जिस समय दन्तिदुर्ग गद्दी पर बैठा उस समय चालुक्यो का अवनति काल था। दन्तिदुर्ग ने इस समय अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दिया जो कि विक्रमादित्य द्वितीय के अधीन था। दन्तिदुर्ग ने अपनी शक्ति काफी बढ़ा ली थी। उसने मालवा, कोशल और कलिङ्ग के राजाओ का दमन किया। इसके पश्चात दन्तिदुर्ग ने पल्लव नरेश नन्दिवर्मन द्वितीय पर आक्रमण किया। अन्त में दोनो शक्तियो में सुलह हो गई। दुब्रिआ महोदय का मत है कि दन्तिदुर्ग ने अपनी कन्या शंखा का विवाह नन्दि-वर्मन के साथ कर दिया था। साथ ही नन्दिवर्मन को गृह युद्ध में सहायता प्रदान किया था। जब दन्तिदुर्ग ने सभी बड़े राजाओ को अपने अधीन कर लिया तो उसने चालुक्य नरेश कीर्तिवर्मन द्वितीय के विरुद्ध खुला द्विद्रोह कर दिया। Radhanpur plates of Govindra III, Baroda plates of Karka, Kapadwani plates of Krishna II के अनुसार चालुक्यो की पराजय Krishna I के द्वारा हुयी किन्तु Sanjan plates of Amoghavarsha I Cambay and Sangli plates of Govinda IV में दन्ति-दुर्ग का नाम उल्लेख है। किन्तु चालुक्यो को पराजित करने के कार्य की ख्याति अधिक Krishna I को दी गई है संभव हो सकता है कि दन्ति दुर्ग अपने आपको दक्षिणपथ का स्वतन्त्र राजा घोषित करने के पश्चात भी कीर्तिवर्मन द्वितीय चार पाँच वर्ष तक शासन करता रहा। Krisha I ने उसे सम्पूर्ण रूप से अन्त कर दिया।

कोशल पर आक्रमण :—

दन्तिदुर्ग ने कोशल के नरेश उदयन पर आक्रमण किया किन्तु Udayendiram plates of नन्दिवर्मन द्वितीय के अनुसार नन्दि वर्मन द्वितीय ने भी उदयन को पराजित किया। Konnur Inscrip-tion of Amoghabarsha I के अनुसार नन्दिवर्मन द्वितीय और दन्तिदुर्ग ने सम्मिलित रूप से कोशल नरेश उदयन को पराजित कर दिया

दन्तिदुर्ग ने पल्लव नरेश नन्दिवर्मन द्वितीय के साथ संधि कर लिया था और उसके साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर लिया था।

जिस समय नन्दिवर्मन द्वितीय गृह कलह में उलझा हुआ था उस समय दन्तिदुर्ग ने उसकी सहायता की थी। दशावतार गुहा लेख में दन्तिदुर्ग को कांची नरेश का विजेता कहा गया है इससे हम यह सिद्ध कर सकते है कि दन्तिदुर्ग ने पहले सहायता किया फिर उसको जीता है किन्तु Bagumra plates के अनुसार दन्तिदुर्ग ने कांची पर आक्रमण किया और अन्त में सन्धि कर लिया यह प्रश्न भी विवाद ग्रस्त है।

दन्तिदुर्ग ने बहुत सी विजय सामन्त शासक की हैसियत से प्राप्त किया। जिस समय चालुक्य नरेश विक्रमादित्य द्वितीय राज्य कर रहा था उस समय सिन्ध के अरबों ने अपनी शक्ति बढ़ाना आरम्भ किया। उस समय विक्रमादित्य द्वितीय ने अपने सामन्त शासक दन्तिदुर्ग को सिन्ध के अरबों को दबाने के लिए भेजा। दन्तिदुर्ग ने अरबों के साथ भयंकर युद्ध किया और अरबों को बुरी तरह पराजित कर दिया। विक्रमादित्य द्वितीय ने दन्तिदुर्ग की सहायता को स्वीकार करते हुये दन्तिदुर्ग को "पृथ्वी वल्लभ" की उपाधि दी। एलोरा के लेख में उसे एक मात्र "महासामन्ताधिपति" कहा गया है। विक्रमादित्य द्वितीय की मृत्यु होने के पश्चात दन्तिदुर्ग ने स्वतंत्रता घोषित कर दिया। और कीर्तिवर्मन द्वितीय को आसानी से पराजित कर दिया According to Altekar "Chalukya emperor was easily defeated merely by the frown without even any weapons being raised"

सिन्ध के मुस्लिम शासकों के निरन्तर आक्रमणों के कारण चालुक्य नरेश निर्वल हो गया था। दन्तिदुर्ग ने इससे लाभ उठाया। उसने चालुक्य के आधीन लाट और सिन्ध प्रदेशों को अपने हाथ में ले लिया और अपने भतीजे (कर्क II) को यहाँ का गवर्नर नियुक्त किया। इसके पश्चात उसने

सम्पूर्ण महाराष्ट्र को जीता समङ्गद लेख (Samangad plates) में दन्तिदुर्ग द्वारा कीर्तिवर्मन द्वितीय की पराजय का उल्लेख है।

"सभ्रू विभंगमगृहीतनिशातशत्रम ।
अश्रान्तमप्रतिहताज्ञमपेतयत्नम ।।
यो वल्लभ सपदि दण्ड वलेन जित्वा ।
भृत्यै: कियदि्भरपिय: सहसा जिगाय ।।"

इस विजय से उसके हाथ में खानदेश, नासिक, पूना, जिला आ गया था।

कीर्तिवर्मन को पराजित करने के बाद दन्दिदुर्ग ने उज्जैन पर आक्रमण किया। यहाँ गुर्जर प्रतिहार वंश के राजा देवराज का राज्य था। सम्भवत: दन्तिदुर्ग ने इसे पराजित किया। Dasavatara Cave Inscription से प्रतीत होता है कि दन्तिदुर्ग ने गुर्जर शासक को जीत लिया था और Sanjan plates के अनुसार दन्तिदुर्ग जब 'Hiranya Garbhadana" अनुष्ठान कर रहे थे। उस समय गुर्जर के शासक ने दन्तिदुर्ग पर आक्रमण किया। दन्तिदुर्ग ने उसे पराजित करके नंदीपुरी (नाडोड) जीत लिया। इसके पश्चात उसने मालवा पर विजय की और वहाँ हिरण्य गर्भदान दिया।

दन्तिदुर्ग ने मध्य प्रदेश पर आक्रमण किया और वहाँ पर भी अपना राजनैतिक प्रभुत्व स्थापित किया। यहाँ बालाघाट के आसपास के प्रदेशो में शैल वंश का राजा जयवर्धन प्रथम राज्य करता था। दन्तिदुर्ग एक महान विजेता के कारण उसने "महाराजाधिराज परमेश्वर" और परम भट्टारक की उपाधियाँ धारण की थीं। दन्तिदुर्ग ब्राह्मण धर्मावलम्बी था। फलस्वरूप वह Rathasaptami के दिन ब्राह्मणो को दान देता था। समङ्गद ताम्रपत्रो में बोध होता है कि उसने अनेक गांव ब्राह्मणो को दान में दिया।

कृष्ण प्रथम

दन्तिदुर्ग के मृत्यु के पश्चात उसका छोटा चाचा कृष्ण प्रथम सिंहासन पर बैठा। चितलदुर्ग के एक अभिलेख से ज्ञान होता है कि दन्तिदुर्ग का कोई पुत्र न होने के कारण कृष्ण प्रथम ने राज्य करना आरम्भ किया किन्तु कुछ विद्वानों का मत है कि कृष्ण प्रथम ने दन्तिदुर्ग का हत्या करके सिंहासन छीन लिया इसका मुख्य कारण यह था कि दन्ति दुर्ग प्रजा को कष्ट देता था। कुछ विद्वानो का मत है कि वह अत्याचारी होने के कारण कृष्ण ने या प्रजा ने उसे गद्दी से उतार दिया। इन विद्वानों ने वेगुम्रा ताम्रपत्रा मे "कृतप्रजाबाधे" शब्द आ पड़ा जिसका अर्थ "प्रजा को दुःख दिया" इस कारण विद्वानो ने मत प्रकट किया कि प्रजा ने दुःख को न सहन कर सकी इस लिये उसे गद्दी से उतार दिया या कृष्ण ने प्रजा का दुःख अपना दुःख समझ कर उसकी हत्या कर दिया। कुछ भी हो ताम्रपत्रो में वास्तव में "अकृतप्रजाबाधे" (जिसने प्रजा के दुख को दूर किया) लिखा हुआ है। Daulata bad plates मे "कृतप्रजापाल" (जिसने प्रजा का पालन किया) लिखा हुआ है। Talegaon plates मे "क्षत प्रजाबाध" (जिसने प्रजा के दुखों को नाश किया) लिखा हुआ है।

बड़ौदा ताम्रपत्र में यह उल्लिखित है कि कृष्ण प्रथम ने अपने एक सम्बन्धी को पदच्युत कर दिया कुछ विद्वानो का मत है कि वह दन्तिदुर्ग था किन्तु डा० अल्टेकर का मत है कि यह कर्क द्वितीय था। इनका उल्लेख अन्त्रोलो छरोली लेख में हुआ है। यह सामन्त शासक था। दन्तिदुर्ग के कोई पुत्र न होने के कारण तथा दन्तिदुर्ग के मृत्यु के पश्चात उसने स्वतन्त्रता घोषित कर दिया किन्तु कृष्ण प्रथम के आगे एक भी न चली।

चालुक्यों की पराजय :

राहप्प:—

अब प्रश्न यह उठता है कि राहप्प कौन था कुछ विद्वान कर्क द्वितीय को कहते है किन्तु यह कथन ठीक नही है क्यों कि लेखो से बोध होता

है कि कृष्ण प्रथम ने राहप्प को पराजित करके "राजाधिराज परमेश्वर" की उपाधि धारण की। अगर यह कर्क द्वितीय होता तो कृष्ण प्रथम कैसे अपने समान्त को पराजित करके यह उपाधि धारण करता। यह राहप्प अवश्य ही जो के दूसरे वंश के नरेश थे। डा० डी० सी० सरकार के मतानुसार राहप्प चालुक्य नरेश कीर्तिवर्मन द्वितीय का दूसरा नाम था। डा० अल्टेकर भी इस मत को स्वीकार करते हैं।

विक्रमादित्य द्वितीय के समय दन्तिदुर्ग उसके आधिन था। जब विक्रमादित्य द्वितीय की मृत्यु हो गयी तो दन्तिदुर्ग ने स्वतन्त्रता घोषित करते हुए कीर्तिवर्मन द्वितीय पर अक्रमण कर दिया और उसे पराजित कर दिया फिर भी कीर्तिवर्मन द्वितीय आसपास के राज्यो में राज्य कर रहा था। जब दन्तिदुर्ग की मृत्यु हो गयी तो कृष्ण प्रथम ने कीर्तिवर्मन पर आक्रमण किया। संभवत दन्तिदुर्ग के पश्चात कीर्तिवर्मन द्वितीय ने अवश्य ही स्वतन्त्रता घोषित कर दिया था जिस कारण कृष्ण प्रथम ने उस पर आक्रमण करके पराजित कर दिया इस प्रकार चालुक्य वंश की कीर्ति कीर्तिवर्मन ने समाप्त कर दिया।

गंगो पर अक्रमण :—

कृष्ण प्रथम ने गंगो परभी आक्रमण किया था। जिस समय कृष्ण प्रथम ने गंगो पर आक्रमण किया उस समय वहाँ श्रीपुरुष नामक शासक राज्य कर रहा था। इसकी राजधानी मण्णे थी जो कि मैसूर प्रदेश में स्थित थी तालेगाँव लेख के अनुसार कृष्ण और श्रीपुरुष के बीच युद्ध हुआ अन्त में श्रीपुरुष पराजित हुआ और गंगे उसके हाथ में आगया।

वेंगी पर आक्रमण :—

कृष्ण प्रथम ने गंगो पर विजय प्राप्त करने के पश्चात तथा बादामी के चालुकयो को पराजित करके वेंगी के चालुकयो पर भी आक्रमण किया। कृष्ण प्रथम ने युवराज गोविन्द द्वितीय को वेंगी के चालुकयो पर आक्रमण करने के लिये भेजा। इस समय उस स्थान पर विष्णुवर्धन चतुर्थ राज्य

कर रहा था। गोविन्द ने भंयकर युद्ध किया अन्त में गोविन्द की विजय हुई। वेंगी कृष्ण प्रथम के हाथ में आगया। Banduk plates के अनुसार सम्पूर्ण Marathi क्षेत्र कृष्ण प्रथम के आधीन हो गया था।

कृष्ण प्रथम सम्पूर्ण हैदराबाद प्रदेश को अपने हाथ में करके उसने दक्षिण कोंकण पर भी आक्रमण किया और वहाँ के शासक को पराजित करके कोंकण को भी अपने अधीन कर लिया। खरेपटन ताम्रपत्र के अनुसार उसने सणफुल्ल नामक अपने अधीनस्थ राजा को यहाँ राज्य करने के लिए नियुक्त कर दिया।

Dr. Altekar के अनुसार कृष्ण प्रथम अपनें भतीजे से गुजरात, खानदेश, बरार और महाराष्ट्र के प्रदेश प्राप्त किया था और कृष्ण प्रथम अपनी योग्यता के बल से कोंकण, कर्नाटक और अधिकांश हैदराबाद प्रदेश को जीत कर राष्ट्रकुट राज्य की और अधिक विस्तार किया। इस विद्वान के अनुसार इसका राजधानी बरार में एलिचपुर थी।

कृष्ण प्रथम ने अल्प समय में अपने राज्य को बहुत दूर तक फैलाया। वह एक विजयता और योद्धा होते हुए भी एक महान निर्माता भी था। उसका निर्माण कार्य का प्रमाण आज भी एलोरा का कैलास मन्दिर से मिलता है। Dr. Altekr के अनुसार "He was also a great builder and caused to be excavated the Ellora Kailasa Temple which is one of the architectural wonders of the world, since the whole structure is hewn out of solid rock". यह मन्दिर वस्तुकला के दृष्टिकोण अपूर्व है। इसमें यह विशेषता है कि एक ही पर्वत को ऊपर से नीचे की ओर काटते हुए मन्दिर का रूप दिया, यह बहुत ही प्रशंसनीय है।

Dr. Smith के अनुसार "This temple is the most marvellous architectural freak in India",

कृष्ण प्रथम एक धार्मिक व्यक्ति भी था लेकिन उसके धर्म के बारे में कोई विद्वान नें मत प्रकट नहीं किया । न हि कोई ताम्रपत्र ने उल्लेख है किन्तु एलोरा का कैलाश मन्दिर उसके धर्म के ओर संकेत करता, अगर व धार्मिक व्यक्ति न होता तो वह कदापि यह मन्दिर निर्माण नहीं करता। वह परम शैव का भक्त था । इसके राज्य का समय 758 से 773 A D तक माना जाता है ।'

गोविन्द द्वितीय

इसके समय से राष्ट्रकूट का महान उत्कर्ष काल माना जाता है। Dr. Altekar के अनुसार कृष्ण I ने अपने राज्य काल में उसे युवराज घोषित किया था। और अपने पिता की मृत्यु के पश्चात उत्तराधिकारी के रूप में सिंहासन पर बैठा । युवराज के अवस्था में उसने वेंगी के युद्ध में अपनी योग्यता का परिचय दे दिया था । Kadba plates में उसको घुड़सवार का महान नेता कहा है और उसने किस तरह वेंगी पर विजय प्राप्त कि अपने प्रिय घोड़े पर चढ़ कर। उसका घोड़ा जिधर निकल जाता था उधर त्रास नास कर देता था। Daulatabad plates के अनुसार उसने Parijata कों बुरी तरह हराया और Govardhana कों सहायता किया। किन्तु हम लोगों को इस विषय में कोई ज्ञान प्राप्त नहीं है कि यह राजा Parijata कौन था और Govardhana को क्यो सहायता किया। Govardhana Nasink जिले में स्थित था। सम्भवत: यह हों सकता है कि इस स्थान पर Govinda का छोटा भाई ध्रुव राज्य कर रहा था इसके पूर्व Parijata ने Govardhana पर आक्रमण किया। गोविन्द ने इस स्थान की रक्षा करते हुये Parijata को हरा दिया और Govardhana कों अपनी अधीन करके अपने छोटे भाई ध्रुव को यहाँ का गर्वनर नियुक्त कर दिया यह क्षेत्र नासिक जिले के अन्तरगत आता है।

Karhad Plates fo Krishna तृतीय के अनुसार गोविन्द द्वितीय सिंहासन पर बैठने के कुछ समय पश्चात वह आराम प्रिय हो गया था। जिस कारण उसने सम्पूर्ण राज्य का भार अपने छोटे भाई ध्रुव के हाथों में दे दिया और भोग विलास में जीवन व्यतीत करने लगा। ध्रुव ने इस अवसर से लाभ उठाना चाहा और वह धीरे-धीरे अपना अधिकार जमाता रहा। पिम्पेरी लेख में गोविन्द के राज्य काल में ध्रुव द्वारा भूमि दान का उल्लेख मिलता है जो कि गोविन्द की अनुमति से नहीं हुआ था। इससे अनुमान लगता है कि ध्रुव ने अपना सत्ता दृढ़ कर लिया था किन्तु गोविन्द द्वितीय ने उसकी चाल समझ ली और ध्रुव को शासन व्यवस्था से हटा दिया। इससे ध्रुव को विद्रोह करने का अवसर प्राप्त हो गया। 780 A D में ध्रुव ने अपने भाई के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। कुछ विद्वानो ने कहा कि ध्रुव स्वार्थ के लिये सिंहासन न चहता था। उसे भय था कि कहीं इस आयोग्य और विलास प्रिय शासक के कारण राष्ट्रकूट राज्य इसके हाथ से लुप्त न हो जाय। इस कारण ध्रुव जनता एवं सामन्त शासकों को अपनी ओर आर्षित करने के लिए यह प्रचार कर दिया कि विलासी गोविन्द के कारण राष्ट्रकूट-वंश अवनति की ओर अग्रसित हो रही है : इस वंश की रक्षा तभी हो सकती जब गोविन्द को पदच्युत कर दिया जाय।

तस्यानुजा निरूपमस्तमुदीर्ण मीस्य।
त्यक्तं नृपैरपि नयने विलुप्यमानम्॥
राज्यं बभार गुरूक्ति वात न्यसस्थम्।
मा भूत् किलान्वयेपरिच्युतिरत्र लक्ष्याः।

(दौलताबाद ताम्रपत्र)

अन्त में दोनों भाइयों में युद्ध छिड़ गया। भाई-भाई के युद्ध में मालवा, गंगवड़ी, वेंगी, और काँची के राजाओं ने गोविन्द को सहायता दी किन्तु गोविन्द पराजित हो गया। कुछ विद्वानों का मत है कि गोविन्द को इन राजाओं से सहायता पाने के पूर्व ही ध्रुव ने उसे पराजित कर दिया

था। कुछ विद्वानों का मत है कि ध्रुव ने उसे बन्दी बना लिया था। और अन्त में हत्या करवा दी अन्य विद्वानों का मत है कि वह कुछ दिनों तक जीवित रहने के पश्चात् उसकी स्वाभाविक रूप से मृत्यु हो गई। उसके अन्तिम काल के बारे में अज्ञात है। धुलिया ताम्रपत्र के आधार पर हम कह सकते हैं कि गोविन्द के पराजित होने के बावजूद भी ध्रुव उसके अधीन राज्य कर रहा था। जब गोविन्द की मृत्यु हो गई तो वह स्वतंत्र रूप से राज्य करने लगा।

ध्रुव

ध्रुव अपने भाई गोविन्द को पराजित करके 780 A D में सिंहासन पर बैठा। धुलिया ताम्रपत्र के अनुसार ध्रुव 779 A D तक गोविन्द के अधीन था। किस वर्ष उसने अपने भाई को सिंहासन से हटाया यह निश्चित रूप ज्ञात नहीं है। जिनसेन के हरिवंश नामक पुस्तक के अनुसार कृष्ण का पुत्र श्रीवल्लभ 773 A D में दक्षिण भारत में राज्य कर रहा था। परन्तु श्रीवल्लभ गोविन्द द्वितीय तथा ध्रुव दोनों की उपाधि थी। यह उपाधि ध्रुव की ही होगी क्योंकि 783 में ध्रुव दक्षिण भारत पर राज्य कर रहा था।

Dr:—Atteker के अनुसार "But since the latest" known date of Govinda II is 779 A. D. which is supplied by the Dhulia plates discussed above, it may be reasonably assumed that Srivallabha, who is mentioned by Jinasena as ruling over the south in 783 A. D. may have been Dhurva rather than Govinda II"

पैठन लेख में ध्रुव की दूसरी उपाधि कालीवल्लभ थी।

780 A. D. में जब ध्रुव सिंहासन पर बैठा तब उसकी आयु 50 वर्ष की थी। परन्तु अबभी उसमें युद्ध वासना कम न हुई थी। अब भी वह युद्ध में भाग लेने के लिये तैयार रहता था। जैसे की उसकी उपाधि कालीवल्लभ अर्थात युद्ध अथवा संघर्ष प्रेमी से ज्ञात होता है।

गद्दी पर बैठने के बाद उसने उन विद्रोही सामन्तों को सुसंगठित किया जिन्होंने उसके भाई को सिंहासन से हटाने के लिए प्रयत्न किया था। इसके बाद उसने उन शासकों को पराजित किया जिन्होंने कि उत्तराधिकार के युद्ध अथवा गृह युद्ध के समय गोविंद द्वितीय की तरफदारी की थी। उनमें तालवाड़, कांची, वेंगी तथा मालवा के शासक प्रमुख थे।

गंग पर विजय:—

ध्रुव ने सबसे पहले दक्षिण सीमावर्ती शासकों को पराजित किया। सर्व प्रथम उसने गंग शासक को पराजित किया। इस समय यहाँ शिवमार द्वितीय राज्य कर रहा था। Dr. Altekar के अनुसार "he was more a scholar than an adminis trator". वह अपनी विद्वत्ता के लिए प्रसिद्ध था। Manne plates से बोध होता है कि उसे तर्क शास्त्र नाटक तथा पातांजली महाभाष्य में रुचि थी। उसने युद्ध में हस्थि (हाथियों के चलाने) संचालन पर पुस्तक लिखी थी। राष्ट्रकूट लेखों से प्रकट होता है कि ध्रुव ने उसे पराजित करके बन्दी बना लिया। गत्तियदपुर लेख के अनुसार शिवमार की अनुपस्थिति में उसके भाई विजयादित्य ने ध्रुव के विरुद्ध संघर्ष जारी रखा। वह भरत की तरह राज्य के लिए लोभ न किया।

Dr. Altekar अनुमान करते हैं कि "The simily makes it quite clear that Sivamara was absent from the Kingdom in the Rashtrakuta prison, and that his younger brother was trying to carry on the struggle against tha invading forces in the

absence of the de-jure ruler" परन्तु उसे भी सफलता न मिली। ध्रुव विजयी हुआ और गंगवड़ी को अपने राज्य में मिला लिया। इस नव विजित प्रदेश में अपने सबसे बड़े पुत्र स्तम्भ को गवर्नर नियुक्त किया।

पल्लवों है युद्ध:—

गंग प्रदेश को जितने के बाद ध्रुव ने कांची के पल्लवों पर दृष्टि डाली। अन्त में उसकी भी बारी आ गई। इस समय पल्लव शासक इतना शक्तिशाली नहीं था। ध्रुव ने पल्लव राज्य पर आक्रमण कर दिया और काँची पर घेरा डाल दिया। रघनपुर लेख के अनुसार पल्लव शासक पराजित हो गया और ध्रुव को बहुत से हाथी प्राप्त हुये।

उत्तरी भारत में त्रिराज्य संघर्ष:—

दक्षिण भारतीय शासकों को पराजित करने के बाद ध्रुव ने उत्तर की ओर ध्यान दिया। इस जमय उत्तरी भारत में प्रभुता स्थापित करने के लिए उज्जैन के प्रतीहारों और बंगाल के पालो में संघर्ष चल रहा था। इसमें ध्रुव ने भी भाग लिया और इस प्रकार भारतवर्ष में एकछत्र-सत्ता की स्थापना के लिए प्रतिहारो, पालो और राष्ट्रकूटों का भयंकर संघर्ष प्रारम्भ हुआ। इतिहास में यह संघर्ष त्रिराज्य संघर्ष के नाम से प्रसिद्ध है।

राष्ट्रकूद वंश में ध्रुव ही सर्वप्रथम राजा था। जिसने उत्तरी भारत की राजनीति में भाग लिया।

कुछ समय पहले तक विद्वानों का विचार था कि धर्मपाल ने एक राष्ट्रकूट राजकुमारी रन्नादेवी से विवाह किया था। इस वैवाहिक संबंध के कारण ध्रुव ने धर्मपाल को वत्सराज के विरुद्ध सहायता दी। परंतु यह मत अब मान्य नहीं है। Dr. Altekar, के अनुसार "The real motive of the northern campaign of Dhruva

seems to been to teach a lesson to Vatsaraja, who had tried espouse the cause of Govind. II Later on Dhruva may have attacked Dharm apala as well as the latter may have tried to thwart his plans, regarding him as a possible rival in the overlordship of the north towards which he himself was aiming."

प्रतिहार और पाल में युद्ध:—

इस समय दोनों शक्तियों में [प्रतियोगिता] चल रही थी। भोज प्रथम के ग्वालियर लेख के अनुसार प्रतिहार शासक वत्सराज ने कन्नौज पर आक्रमण किया। इस समय कन्नौज पर इन्द्रायुध राज्य कर रहा था। वत्सराज ने इंद्रायुध को पराजित करके कन्नौज छीन लिया। इस समय कन्नौज का राजनैतिक महत्व पाटलीपुत्र जैसा था।

Dr. Altekar के अनुसार "Indrayudha does not seem to have been immediately deposed; for some time he continued to occupy the imperial throne at Kanauj as a mere puppet in the hands of tlee Conqueror."

धर्मपाल इसको सहन न कर सका क्यों कि वह भी सम्पूर्ण उत्तरी भारत में अपनी साम्राज्य की स्थापना का प्रयास कर रहा था। इसलिये वह इतनी सरलता से कन्नौज राज्य को अपने प्रतिद्वन्द्वी प्रतीहार वंश के हाथ में नहीं जाने दिया। धर्मपाल ने सम्भवत: इन्द्रायुध के एक सम्बंधी चक्रायुध को कन्नौज के सिंहासन पर बैठाया और कन्नौज राज्य के लिये वत्सराज और धर्मपाल में युद्ध हुआ। वनी-डिण्डोरी लेख से प्रतीत होता है कि वत्सराज ने गौढ़ शासक को पराजित किया और Sanjan plalts के अनुसार उसने धर्मपाल को गंगा यमुना के दोआब में पराजित किया।

ध्रुव के द्वारा वत्सराज और धर्मपाल की हार:—

जिस समय वत्सराज और धर्मपाल में युद्ध चल रहा था उस समय राष्ट्रराष्ट नरेश ध्रुव ने उत्तरी भारत की राजनीति में हस्तक्षेप किया। इसका मुख्य कारण यह था कि वह भी अपने साम्राज्य की स्थापना यहाँ भी करना चाहता था। वह पहले से ही वत्सराज से क्रुद्ध था क्योंकि उसने गृह युद्ध में ध्रुव के विरुद्ध गोविन्द की सहायता की थी। बनी डिएडोरी और रधनपुर अभिलेखों का कथन है कि दोनों में भयंकर युद्ध हुआ अन्त में ध्रुव की विजय हुई।

वत्सराज को पराजित करने के पश्चात ध्रुव ने धर्मपाल पर आक्रमण किया। संजन लेख से प्रकट होता है कि गंगा-यमुना के दोआब में ध्रुव ने धर्मपाल को पराजित किया।

"गंगा यमुनयोर्मध्ये रज्ञो गौडस्य 'नश्यत:।
लक्ष्मी लीलार विन्दानि श्वेतच्छत्राणि योऽहरत ॥

सूरत लेख के अनुसार उसकी सेनाओं ने गंगा नदी के प्रवाह को अवरुद्ध कर दिया था।

"गागौघसन्ततिनिरोध विवृद्ध कीर्ति:"

बड़ौदा लेख से प्रकट होता है कि उसने गंगा-यमुना के दोआब पर अधिकार कर लिया था।

Dr. Altekar के अनुसार ध्रुव द्वारा उत्तरी भारत विजय केवल दिग्विजय मात्र ही था। वह साम्राज्य विस्तार नहीं चाहता था। "Dhruva's expedition in Northern India was merely of the nature of a digvijaya. .... Boundaries of Rashrakuta empire did not alter as a result of his successes against Vatsaraja and Dharmapala."

ध्रुव अब वृद्ध हो चुका था और वह अपने राज्य से काफी दूर चला आया था। अतः वह दक्षिण को पुनः लौट गया। गोविंद द्वितीय के समय से जो राष्ट्रकूट सत्ता निर्वल हो रही थी। उसे ध्रुव ने पुनः संगठित किया। वास्तव में ध्रुव भारतवर्ष के एक महान विजेताओं में गिना जाता है। Dr. Altekar के अनुसार "He was one of the ablest of Rashtrakuta rulers. During a short reing of about 13 years he not only re established the Rashtrakuta ascendency in the South, which was seriously endangered by his predecessor's loose and Vicious Government but made the Rashtrakutas an all India power."

ध्रुव अपने राज्य काल में गोविंद तृतीय को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत कर दिया था और इसने अपने पिता को सैन संचालन में सहायता किया था जिससे ध्रुव खुश हो कर और योग्य तथा अनुभवी जान कर गोविंद तृतीय को ही उतराधिकारी के लिये चुना था।

ध्रुव के कई पुत्र थे जिसमें चार का नाम प्राप्त होता है। स्तम्भ-रनाभलोक, कर्क सुवर्ण वर्ष, गोविंद और इन्द्र।

1 स्तम्भ गंगवाड़ी का प्रान्तीय शासक था।

2 कर्क सुवर्ण वर्ष खान देश का शासक था।

3 गोविंद तृतीय सिंहासन पर बैठने के बाद अपने छोटे भाई इन्द्र को दक्षिण गुजरात का शासक नियुक्त किया।

ध्रुव की मृत्यु के समय पुत्रों का काफी आयु हो चुकी थी। अतः उत्तराधिकारी के युद्ध से मुक्त पाने के लिए ध्रुव ने गोविन्द तृतीय के उत्तराधिकारी मनोनीत किया। उसकी जीवित अवस्था में ही एक कंठिका द्वारा उसका राज्याभिषेक किया गया।

"राज्याभिषेककलशैरभिषिच्य दत्ताम्
राजाधिराजपरमेश्वरतां स्वपित्रा"

(सूरत लेख)

इतना होते हुए भी ध्रुव की मृत्यु के बाद उत्तराधिकार की समस्या उत्पन्न हो ही गई। गोविन्द तृतीय ने इसका विरोध किया। पैठन लेख के अनुसार गोविंद ने अपने पिता से राज्य प्राप्त कर लिया था क्योंकि इसका समर्थन कर्क के सूरत लेख से भी होता है।

भाई भाई में युद्ध: —

पैठन लेख के अनुसार गोविंद के सिंहासन पर बैठते समय शान्ति रही परंतु कुछ समय बाद स्तम्भ रनाभलोक ने 12 शासकों के साथ एक गुट बनाकर सिंहासन प्राप्त करने के लिये गोविंद के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। इन 12 शासकों में शिवमार भी था जो ध्रुव के समय से कारागार में पड़ा था और जब गोविंद सिंहासन पर बैठा तो शिवमार को मुक्त कर दिया था लेकिन शिवमार गोविन्द के विरुद्ध स्तम्भ का साथ दिया। सम्भवत: यह 12 शासक पड़ोसी तथा सामन्त शासक थे। संजन लेख के अनुसार उच्च पदाधिकारियों ने भी स्तम्भ को सहायता दी। इन्द्र ने गोविंद को सहायता दिया। इसके फलस्वरूप गोविंद ने इन्द्र को दक्षिण गुजरात का शासक नियुक्त किया। गोविंद स्वयं भी एक योग्य योद्धा था। इस कारण उसने उन 12 शासकों को तथा स्तम्भ को पराजित कर दिया। गोविंद एक दयालु व्यक्ति होने के कारण उसने 12 शासकों तथा स्तम्भ के साथ उदारता का व्यवहार किया। स्तम्भ को पुन: गंगा प्रदेश का प्रांतीय शासक नियुक्त किया।

गंगवड़ी का युद्ध : —

स्तम्भ गंगवड़ी का शासक था अत: गोविंद के साथ युद्ध दक्षिण करनाटक में हुआ था। इस समय गंगा प्रदेश के शासक मुत्तारस ने अपनी स्वतंत्रता घोषित की और उसने स्तम्भ को सहायता देने का वचन दिया

परंतु गोविंद ने इस शासक को बुरी तरह पराजित किया। और गंगवड़ी को पुनः राष्ट्रकूट साम्राज्य में मिला लिया।

कांची पर आक्रमण :—

गोविंद गृह युद्ध में सफलता प्राप्त करने के पश्चात् तथा गंगवड़ी को अपने अधीन करके कंची पर आक्रमण किया। गोविंद के पिता ध्रुव ने कांची के शासन को पराजित किया था परंतु इस शासक ने स्तम्भ को गृह युद्ध में सहायता दी थी। इस कारण गोविंद ने पुनः उसे 803 A D में पराजित किया। British Museum plates के अनुसार इस विजय परिणाम स्वरूप उसे सम्पूर्ण सफलता प्राप्त न हुई अतः उसे कांची के पल्लव पर पुनः एक बार फिर आक्रमण करना पड़ा और पल्लव नरेश को पराजित किया।

चालुक्य पर आक्रमण :—

दक्षिणी समस्याओं से मुक्ति पाकर उसनें वेंगी के चालुक्य की ओर ध्यान दिया। सम्भवतः उसने चालुक्य शासक विजयादित्य पर आक्रमण किया। Dr. Altekar के अनुसार "Govinda attacked him probably because of the old feud between the two houses" इसका समर्थन रधनपुर लेख तथा अमोघवर्ष के संजन लेख से भी होता है। यह लड़ाई 12 वर्ष तक चलती रही जिसमें 108 बार दोनों पक्ष में युद्ध हुआ और अन्त में सफलता गोविंद ने ही पाई परंतु अमोघवर्ष के समय पुनः चालुक्य शासक प्रवल हो गये।

उत्तरी भारत पर आक्रमण:—

गोविन्द तृतीय ने दक्षिण के शासकों को पराजित करने के बाद उत्तरी भारत पर आक्रमण किया। इस समय उत्तरी भारत में वत्सराज का पतन हो चुका था और गोविंद दक्षिण युद्ध में व्यस्त था। इस मौके का फ़ायदा उठाते हुए धर्मपाल ने कन्नौज को अपने अधीन करके अपने संबंधी चक्रायुध को स्थापित किया और संजाब तथा मध्य प्रदेश तक

अपना राजनैतिक प्रभुत्व स्थापित कर लिया। संजन ताम्रपत्र पठारी स्तम्भ लेख और रधनपुर लेख से प्रकट होता है कि कुछ समय पश्चात गुर्जर प्रतिहार नरेश नागभट्ट द्वितीय ने पुनः खोए हुए गुर्जर प्रतिहार साम्राज्य को प्राप्त कर लिया और गौरव का सीमा पर पहुंच चुका था।

नागभट्ट द्वितीय और गोविंद का युद्ध:—

गोविंद ने नागभट्ट द्वितीय पर आक्रमण कर दिया। गोविंद ने युद्ध का संचालन योग्यता से किया। उसने सर्व प्रथम अपने सेनापतियों को उड़ीसा, कोशाल, मालवा तथा वेंगी पर अधिकार स्थापित करने के लिए नियुक्त किया। इन्द्र को गुर्जर प्रतिहार के राज्य पर आक्रमण करने का आदेश दिया। यह सब राज्य नागभट्ट द्वितीय के अधीन था और स्वयं नागभट्ट द्वितीय से युद्ध करने के लिए। दोआब और कन्नौज की ओर बढ़ा। करीब-करीब गोविंद को सभी स्थानों में सफलता प्राप्त हुई। इन्द्र को गुजरात में सफलता प्राप्त हुई। गोविद को नागभट्ट द्वितीय के विरुद्ध भी सफलता प्राप्त हुई। इस विजय का समर्थन संजन ताम्रपत्र तथा रधनापुर लेख से होता है।

नागभट्ट द्वितीय का पराजय के पश्चात कन्नौज के राजा चक्रायुध और बंगाल के राजा धर्मपाल ने स्वयं ही गोविंद के समक्ष आत्म समर्पण कर दिया।

गोविंद ने उत्तरी भारत को अपने साम्राज्य में न मिलाया, उसकी उत्तरी विजय एक महान दिग्विजय थी। उसने नागभट्ट द्वितीय धर्मपाल तथा चक्रायुध को अपनी अधीनता मानने के लिए बाध्य किया। सम्भवतः नागभट्ट द्वितीय द्वारा नियुक्त मालवा शासक ने भी उसकी अधीनता को स्वीकार कर लिया।

Dr. Altekar के अनुसार "Malva was almost assimilated to the Rashtra kuta dominions as a result of this expedtion"

इसके बाद गोविंद ने भड़ौच के श्रीभवन राज्य के शासक शर्व ने गोविंद के समक्ष आत्म समर्पण किया और उसे अनेक उपहार दिया।

दक्षिणी राज्यों के संघों से युद्ध:—

गोविंद की अनुपस्थिति से लाभ उठाकर दक्षिणी भारत के राज्यों, गंगवड़ी, केरल, चोल, पाण्ड्य और काँची ने गोविंद के विरुद्ध एक संघ बनाया। गोविंद ने गंग सैनिक को पराजित कर दिया और इस वंश के अनेक लोगों की हत्या कर दिया और काँची पर पुनः अधिकार हो गया और चोल एवं पांड्य की राजधानी उजाड़ डाली गई। इस युद्ध के परिणाम स्वरूप सिंहल के शासक ने आत्म समर्पण कर दिया।

अब गोविंद वृद्ध हो चुका था। वह राष्ट्रकूट वंश का सबसे पराक्रमी तथा योग्य राजा सिद्ध हुआ।

बड़ोदा लेख में उसकी तुलना पार्थ (अर्जुन) से की है। उसकी मृत्यु 814 A. D. में हुई।

अमोघवर्ष I

गोविन्द तृतीय के मृत्यु के पश्चात इसका पुत्र अमोघवर्ष सिंहासन पर बैठा। सिंहासन पर बैठते समय उसकी आयु ६ वर्ष की थी। कहा जाता है कि जिस समय गोविंद तृतीय उत्तरी भारत के अभियान से लौटते समय भड़ौंच के श्री भवन राज्य में ठहरा हुआ था उसी समय उसके पुत्र अमोघवर्ष का जन्म हुआ था। गोविन्द तृतीय ने अपनी मृत्यु के पहले ही अमोघवर्ष को उत्तराधिकारी चुना और अपने भाई इन्द्र के पुत्र कर्क सुवर्णवर्ष को उसका संरक्षक नियुक्त किया। 816 A. D. के नौसारी (Naosari) लेख के अनुसार इस समय तक शान्ति रही और कहीं उपद्रव नहीं हुआ।

प्रारम्भिक कठिनाईयाँ:—

शीघ्र ही चारो ओर से आपत्तियाँ उमड़ पड़ी और राज परिवार में कलह उत्पन्न हो गई। इसका मुख्य कारण सम्राट की अल्पायु होने से

पड़ोसी राजाओं के स्थान-स्थान पर विद्रोह करना प्रारम्भ कर दिया। मंत्री अविश्वासी हो गये तथा गंग शासक ने विद्रोह कर दिया और इसने कई राष्ट्रकूट पदाधिकारियों को हत्या करवा दी। परन्तु किसी भी लेख से विद्रोही शासकों का नाम नहीं प्राप्त होता है। संजन लेख, तथा कपंद्वज लेख से प्रकट होता है कि अमोघवर्ष को कुछ समय के लिए सिंहासन से से हटा दिया।

कर्क द्वारा सम्राज्य को सुव्यवस्थित करना:—

इस भयंकर संकट काल में कर्क ने अपनी महनता को प्रकट किया। यह गड़बड़ी सम्भवत: 816 से 821 A.D तक फैली। संजन लेख के अनुसार यह अशान्ति भयंकर थी और सम्भवत: यह अशान्ति 3 या 4 वर्ष तक फैली रही। सूरत लेख के अनुसार कर्क 821 में इन उपद्रोहियों को दमन करने में सफल हुआ और अपने बाहुबल के द्वारा पुन: शान्ति स्थापित किया।

अमोघवर्ष की पुन: प्रतिष्ठा:—

कर्क ने सम्पूर्ण शान्ति स्थापित तथा विद्रोहियो को दमन करने के पश्चात अमोघवर्ष को पुन: सिंहासन पर स्थापित किया। इस समय अमोघवर्ष की आयु केवल 12 या 13 वर्ष की था। अत: इस सफलता का श्रेय कर्क सुवर्णवर्ष की प्राप्त होना चाहिए।

चालुक्यों से युद्ध:—

अमोघवर्ष के पिता गोविन्द ने अपने समय में चालुक्य नरेश विजयादित्य द्वितीय को पराजित किया था और उसका अपमान किया था। अब अवसर पाकर विजयादित्य ने अमोघवर्ष पर आक्रमण कर दिया और उसे सफलता भी प्राप्त हुयी। सिरपुर, सांगली कर्हद लेखों से अनुमान लगता है कि अमोघवर्ष ने अपनी शक्ति संचय करके चालुक्यों को नीचा दिखाकर अपने वंश के गौरव को ऊँचा किया। सम्भवत: यह गौरव विजयादित्य की मृत्यु के पश्चात हुआ था। एक लेख के अनुसार चालुक्य

नरेश विजयादित्य प्रथम ने 12 वर्ष तक राष्ट्रकूटों एवं गंगों से युद्ध। किया उसके इस युद्ध का अन्तिम समय अमोघवर्ष के राज्य काल के समय में पड़ता है। Sirur लेख के अनुसार वेंगी का शासक अमोघवर्ष की पूजा करता था। इस समय चालुक्य शासक गुणग विजयादित्य शासन कर रहा था।

गुर्जर प्रतिहार:--

जिस समय अमोघवर्ष वेंगी के चालुक्यों के युद्ध में व्यस्त था। उस समय गुर्जर प्रतिहार शासक मिहिर भोज अपनी शक्ति बढ़ा रहा था। अमोघवर्ष इनको रोक न सका। इस शासक ने अपना राज्य काफी दूर तक फैला लिया था। वह बड़ा प्रतापी राजा था। यदि अमोघवर्ष में अपने पिता गोविन्द की तरह योग्यता होती तो वह अवश्य इन बढ़ती हुई शक्तियो को रोकता। मिहिर भोज उज्जैन प्रदेश पर अधिकार करते हुए नर्मदा तक पहुँच गया। इस तरह मालवा अमोघवर्ष के हाथ से चला गया।

पालो से संबंध:--

अमोघवर्ष ने बंगाल के मामलों में भी हस्तक्षेप नहीं किया। जिस कारण वह भी राज्य विस्तार करने लगे। बंगाल के पाल लेखों का मत है कि नारायणपाल ने एक द्रविड़ नरेश को परास्त किया था कुछ विद्वानों का मत है कि यह अमोघवर्ष स्वयं था।

दक्षिणी शासको से सम्बंध :—

दक्षिणी शासको के साथ उसका सम्बंध कुछ बचने वाला था। उसके राज्य काल के शुरु में ही गंग नरेश ने स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली थी। अमोघवर्ष में इतनी शक्ति न थी कि वह पुनः इस पर अधिकार प्राप्त कर सके और न ही अधिकार प्राप्त कर सका। इसलिए उससे बचने के लिए अपनी कन्या (Chandrobelabba) चन्दोबेलब्बा का

विवाह गंग राजकुमार भुतुग (Bhutuga) के साथ कर दिया। कृष्ण द्वितीय अमोघवर्ष का और एक पुत्र था।

अन्तिम काल :—

अपने राज्य के अन्तिम काल में अमोघ वर्ष में वैराग्य आ गया और उसमें जैन धर्म के प्रति आकर्षक उत्पन्न हो गया। परन्तु उसमें हिन्दू धर्म के प्रति रुचि थी क्योंकि संजय लेख के अनुसार यह महा लक्ष्मी का उपासक था।

अमोधवर्ष एक विद्वान भी था। उसने "कविराजमार्ग" नामक पुस्तक लिखा। यह कन्नड भाषा का काव्य शास्त्र है। वह साहित्य प्रेमी होने के नाते उसने प्रसिद्ध विद्वान जिनसेन को राजाश्रय दिया था। इस विद्वान का आदिपुरण प्रसिद्ध है। वह नागवर्मन II, केसीराज, भट्टा कालन्त नामक लेखों का आश्रयदाता था।

अमोघवर्ष ने अपने राज्य काल के अन्त में संसारीकता त्याग दी और कभी कभी राज्य भार, युवराज तथा मंत्रियों को देकर अपने जैन गुरु के पास एकान्त वास करता था। Dr. Altekar के अनुसार "Amoghavarsha's reign was long, but it was not brilliant from the military point of view".

कृष्ण II

अमोघवर्ष का पुत्र कृष्ण द्वितीय का सम्पूर्ण जीवन युद्धों में ही व्यतीत हुआ। उसने दक्षिण में गंगों तथा नोलम्बास (Nolambas) के साथ युद्ध किया पूर्व में वेंगी के चालुकयो से और उत्तर में गुर्जर प्रति-हारो के साथ युद्ध किया। इन युद्धों में उसे चेदि राज कोक्कल से बड़ी सहायता मिली। कोक्कल उसका श्वसुर था और उस समय चेदि में राज्य कर रहे थे। विलहरी लेख के अनुसार कोक्कल सम्पूर्ण पृथ्वी को जीत कर दक्षिण में कृष्ण द्वितीय को प्रतिष्ठित किया इससे अनुमान लगता है

कि कोक्कल ने पहले दक्षिण को जीत कर तथा कृष्ण द्वितीय को अपना संबंधी बना करके दक्षिण में राज्य करने के लिये अनुमती दे दिया। फल-स्वरूप कृष्ण द्वितीय की संकट काल में कोक्कन ने उसको सहायता दिया।

वेंगी से युद्ध :—

कृष्ण द्वितीय के समय में वेंगी के चालुकय नरेश विजयादित्य तृतीय उसका प्रबल शत्रु था। अमोघवर्ष ने इस नरेश को पराजित किया था। इस कारण उसने अब बदला लेने के लिये कृष्ण द्वितीय पर आक्रमण कर दिया। लेखो के अनुसार विजयादित्य तृतीय ने कृष्ण को पराजित कर दिया था। Kaluchamburu) लेख के अनुसार विजयादित्य तृतीय के बाद चालुकय नरेश भीम ने भी कृष्ण को पराजित किया। इस प्रकार यह प्रतीत होता है कि कृष्ण द्वितीय के समय चालुकय नरेश बहुत ही शक्ति-शाली था। कृष्ण द्वितीय ने किसी प्रकार से भी चालुकयो को पराजित नहीं कर पाया था।

प्रतीहारो से युद्ध :—

यह युद्ध ध्रुव के समय ही से चलता आ रहा है। कृष्ण के समय में प्रतीहार नरेश भोज प्रथम भी शक्तिशाली था। इस शासक ने अमोघवर्ष के समय में ही अपना राज्य काफी दूर तक फैला लिया था। भोज प्रथम ने कृष्ण द्वितीय पर आक्रमण कर दिया। आक्रमण का मुख्य कारण यह था कि दोनों पक्ष मालवा को अपने अधिकार में रखना चाहते थे। किन्तु यह सम्भव नहीं था। इसलिए इन शक्तियों में युद्ध चलता रहा। कभी कृष्ण द्वितीय को सफलता मिली और कभी भीम प्रथम को, यह झगड़ा अनिर्णीत ही रहा। कुछ विद्वानों का मत है कि कृष्ण प्रथम इस युद्ध में विजय प्राप्त की। जिसमें उसका ससुर कोक्कल का भी हाथ था।

गंग से युद्ध :—

कृष्ण ने गंगो से भी युद्ध किया किन्तु अमोघवर्ष के शासन काल में गंगो ने अपने को स्वतंत्रता घोषित कर दिया था। अमोघवर्ष में उतनी शक्ति न रह गई थी कि वह शत्रु को पराजित करे तथा उससे बचने के लिये अपनी कन्या का विवाह एक गंग के राजकुमार से दे कर दी। अब कृष्ण द्वितीय भी इस राज्य को पुनः अपने राज्य में फिर से मिलाने में असफल रहा।

कृष्ण द्वितीय के इतिहास से ज्ञात होता है कि वह भी युद्ध में इतना दक्ष न था Dr. Altekar के अनुसार "Krishna was not an able and gifted ruler like his grand father" कृष्ण द्वितीय अपने पिता की भांति एक शान्तिप्रिय तथा धर्मानुरागी व्यक्ति था।

इन्द्र तृतीय

कृष्ण द्वितीय का पुत्र जगंत्तुंग की मृत्यु उसके जीवन काल में ही हो चुकी थी। अतः कृष्ण द्वितीय की मृत्यु के पश्चात उसका पौत्र इन्द्र तृतीय राष्ट्रकुट सिंहासन पर बैठा।

जिस समय इन्द्र तृतीय सिंहासनारूढ़ हुआ उस समय उसकी आयु ३५ वर्ष की थी। उसने अपने को एक दक्ष योद्धा प्रमाणित किया। उसके समय में गुर्जर प्रतीहार निर्बल पड़ गये थे। इन्द्र तृतीय ने गुर्जर प्रतीहार पर आक्रमण कर दिया इस समय प्रतीहारों के पास कोई संघ न था जो कि इन्द्र तृतीय का सामना करें इस अवस्था में गुर्जर प्रतीहार सम्राट महीपाल युद्ध से भाग खड़ा हुआ इस प्रकार इन्द्र तृतीय ने प्रतीहारों पर अपना अधिकार करके कन्नौज को अपने अधीन कर लिया। खम्भात के पत्र लेखों के अनुसार उसका सबसे महत्वपूर्ण कार्य "महोदय (कन्नौज) के शत्रुनगेर

का पूर्णत विध्वंस" था। इन्द्र तृतीय ने परमार वंश के राजा उपेन्द्र पर आक्रमण करके उसे पराजित कर दिया और अपने अधीन कर लिया। कुछ विद्वानों का मत है कि यह युद्ध का कार्य इन्द्र तृतीय ने युवराज के रूप में किया था।

Cambay plates के अनुसार उसने सबसे पहले उज्जैन पर आक्रमण किया फिर यमुना की घाटी को पार करते हुये कन्नौज को अपने अधीन कर लिया इन्द्र तृयीय ने अपने भुजबल के द्वारा राष्ट्रकूटों की खोई शक्ति को पुन: प्रतिष्ठित किया Dr. Altekar के अनुसार "Indra III was thus a very capable and brilliant general. During his short reign, he succeeded in shattering the prestige of Imperial Pratiharans, and the Rashtrakuta army again beecame a terror in the north"

(अन्तिम चार शासक)

अमोघवर्ष II

इन्द्र की मृत्यु के पश्चात उसका बड़ा पुत्र अमोघवर्ष द्वितीय सिंहासन पर बैठा Fleet महोदय के अनुसार अमोघवर्ष द्वितीय ने राज्य नही किया। अमोघवर्ष द्वितीय ने शासन किया अथवा नहीं किया यह एक वादविवाद का प्रश्न है। सगली लेख में अमोघवर्ष का नाम उल्लेख नहीं है जब कि उसमें गोविन्द चतुर्थ का नाम उल्लेख है। इससे यह अनुमान लगता है कि इन्द्र तृतीय के पश्चात गोविन्द IV राजा हुआ न कि अमोघवर्ष द्वितीय लेकिन यह कथन ठीक नहीं है। दूसरी तरफ मदन लेख देवली लेख और कर्हाद लेख के अनुसार इन्द्र तृतीय के पश्चात अमोघवर्ष द्वितीय ने शासन किया। अब प्रश्न उठता है संगली लेख में उसका नाम क्यों नहीं उल्लेख किया गया। इस प्रश्न पर हम कह सकते हैं कि गोविन्द IV अमोघवर्ष का भाई था और संगली लेख गोविन्द चतुर्थ के द्वारा

लिखा गया है। सम्भवत: गोविन्द चतुर्थ ने अमोघवर्ष द्वितीय को सिंहासन से उतार कर अथवा उसकी हत्या कर के सिंहासन पर बैठा और लेख में अपना नाम उल्लेख किया जिसमें अपने दुष्कर्म को छिपाया। लेकिन कुछ भी हो अमोघवर्ष ने एक वर्ष तक राज्य किया। मदन लेख में भी उल्लेख है कि उसने कुल एक वर्ष राज्य किया। इतने अल्प काल तक राज्य करने का क्या कारण हो सकता है। इस प्रश्न के लिए दो कारण हो सकते हैं। पहला यह तो गोविन्द चतुर्थ ललोपीत होकर एक वर्ष के अन्दर उससे राज्य छीन लिया अथवा उसके साथ दुर्व्यवहार किया जिस कारण उसने राज्य छोड़ दिया और आत्म हत्या कर लिया। अथवा उसको मार डाला।

शिलाहार नरेश छद्दै देव के एक लेख में उल्लेख है कि गोविन्द IV ने अपने भाई अमोघवर्ष द्वितीय और उसकी स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार किया था। उपर्युक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि अमोघवर्ष अवश्य ही एक दुर्बल व्यक्ति था अथवा धार्मिक व्यक्ति था जिस कारण उसने अपने भाई के कुकर्म को नहीं रोका। कुछ विद्वानों का मत है की वह धार्मिक अभिरुचि का नृपति था फलस्वरूप उसने अपने को राज्य दे दिया। अमोघवर्ष ने अल्प समय में कोई भी युद्ध नहीं किया था न ही राज्य व्यवस्था किया। अमोघवर्ष ने Chedi की एक राजकुमारी से विवाह किया था।

गोविन्द् चतुर्थ

अमोघवर्ष के बाद गोविन्द चतुर्थ राष्ट्रकुट के सिंहासन पर बैठा। अब यह कहना कठिन है कि वह किस प्रकार से सिंहासन पर बैठा। कुछ विद्वानों के अनुसार वह अमोघवर्ष को मार कर गद्दी पर बैठा। जिस समय यह गद्दी पर बैंठा उस समय उसकी आयु २० वर्ष की थी संगली लेख के अनुसार वह बड़ा सुन्दर देखने में था। वह बड़ा विलासी शासक था वह सम्पूर्ण समय में विलासिता और नाच गाने में लिप्त रहता था।

(Kharepatan) लेख के अनुसार उसको चारो तरफ की नृतकियाँ घेरे रहती थी और हर समय गाना बजाना होता था। इस अवस्था में राज्य का कार्य शिथिक पड़ने लगा चारो तरफ से शत्रु लोग आक्रमण करने के लिए मौका ढूँढ़ रहे थे। इस मौके का फायदा उठाते हुए प्रतीहार नरेश महीपाल ने पुनः कन्नौज को अपने अधीन कर लिया चालुकय नरेश भीम द्वितीय भी इस मौके से न चूका उसने भी उसे पराजित कर दिया। सामन्त शासक भी उसके खिलाफ हो गया। और उसके विरुद्ध विद्रोह करने लगे। इस प्रकार से उसका अवनती काल आ पहुँचा और अन्त में उसको सिंहासन से हटा कर उसके चाचा अमोघवर्ष तृतीय को सिंहासन पर बैठाया।

अमोघवर्ष तृतीय

गोविन्द चतुर्थ को सिंहासन से उतार कर उसके चाचा अमोघवर्ष तृतीय को सिंहासन पर बैठाया लेकिन इस कार्य के पीछे अवश्य कोई हाथ था। अमोघवर्ष तृतीय एक धर्मी व्यक्ति था वह राज्य के बदले धर्म को अधिक चाहता था। अब प्रश्न उठता है कि सामन्तो ने क्यों ऐसे व्यक्ति को राजगद्दी पर बैठाया तथा उन लोगों का मुख्य उद्देश्य था राज्य को सुदृढ़ करना। इसमें अमोघवर्ष तृतीय का पुत्र कृष्ण तृतीय का हाथ था। वह जानता था कि अपने पिता के बाद वह उत्तराधिकारी होगा और अगर कोई दूसरा राजा गद्दी पर बैठा तो उसका पुत्र उत्तराधिकारी होगा। इसलिये कृष्ण तृतीय ने अपने पिता को मजबूर किया सिंहासन पर बैठने के लिए और सम्पूर्ण राज्य भार को अपने हाथ में लेकर तथा प्रसाशन कार्यों को चलाता रहा। उसका पिता नाम मात्र के लिए था। देवली लेख के अनुसार सामन्तों द्वारा प्रेरित किये जाने पर तथा अपने पुत्र के भविष्य को सोच कर तथा संकोच के साथ सिंहासन पर बैठा।

अमोघवर्ष तृतीय ने अपनी पुत्री (Revakanimmadi) का विवाह एक गंग राजकुमार (Permadi Butuga II) के साथ कर दिया।

कृष्ण ने अपने पिता का राज्य बढ़ाने के लिये गंग राज्य पर आक्रमण किया। इसका मुख्य कारण अपने बहनोई (Butuga II) को गंग सिंहासन पर बैठाया। इस समय गंग राज्य पर राजा राचमल्ल राज्य कर रहा था। कृष्ण तृतीय ने राचमल्ल को पराजित करके मार डाला और अपने बहनोई भूतुग द्वितीय को गंग का राजा नियुक्त किया।

कृष्ण तृतीय ने गंग नरेश को पराजित करने के पश्चात वह उत्तर की तरफ अपनी दृष्टि डाली। उसने (Chedi) को पराजित कर दिया। यद्पि इस परिवार में उसका माता और स्त्री का जन्म हुआ था। कृष्ण तृतीय ने चंदेल राज्य के कालिंजर और चित्रकूट के किले को अपने अधिकार में कर लिया। कृष्ण तृतीय ने युवराज के रूप में जो कार्य किया वे बहुत ही प्रशंसनीय थी। अमोघवर्ष तृतीय के समय से खोई हुई राष्ट्र-कुट वंश का गौरव पुनः प्राप्त हुआ।

कृष्ण तृतीय

अमोघवर्ष की मृत्यु के पश्चात उसका सुयोग्य पुत्र कृष्ण तृतीय सम्पूर्ण रूप से राज्य का अधिकारी बना। यदपि अपने पिता के समय में राज्य का सारा भार इसी के हाथ में था और उस समय उसने अपनी शक्ति का परिचय दिया था।

कृष्ण तृतीय ने अपने पिता के समय में छेदी, गंग, प्रतिहार तथा चंदेल शासकों को पराजित कर दिया किन्तु अब उसके समय में एक बड़ी शक्ति का उदय हुआ। कृष्ण तृतीय के समय में चोल अपनी शक्ति बढ़ा रहा था। कृष्ण तृतीय ने चोल का सामना किया। उसका सर्वप्रथम युद्ध चोलों के साथ हुआ। कन्याकुमारी लेख के अनुसार चोल नरेश परान्तक ने कृष्ण तृतीय पर आक्रमण कर दिया और उसे पराजित करके वीर चोल की उपाधि धारण की। कृष्ण तृतीय इस पराजय से तनिक भी

विचलित न हुआ उसने शक्ति संचय करके चोल पर आक्रमण कर दिया और युवराज राजादित्य को पराजित करके मार डाला। इस युद्ध में भुतुग न कृष्ण तृतीय को पर्याप्त सहायता दिया था। कुछ विद्वानों का कहना है कि भुतुग ने राजादित्य को पराजित करके मार डाला। कुछ भी हो कृष्ण तृतीय ने चोलों से बदला ले लिया। सिद्धलिंगमादम और उक्कल विष्णु मन्दिर के लेखों से बोध होता है कि कृष्ण तृतीय ने चोलों से कांची और तञ्जौर छीन कर अपने अधीन कर लिया। कहदि लेख के अनुसार उसने लंका, केरलो तथा पाण्डयो के शासकों को भी पराजित करके अपने अधीन कर लिया। इस लेख में कलचुरि नरेश का उल्लेख है। उस समय कलचुरि नरेश युवराज प्रथम राज्य कर रहा था। कृष्ण तृतीय ने उसे भी पराजित कर दिया। सोम देव के कथन के अनुसार उसने चेरों को पराजित किया। विलदहो लेख के अनुसार युवराज प्रथम ने पुनः अपना राज्य वापस लिया।

कृष्ण तृतीय एक महान विजेयता था। वह युवराज से लेकर सम्राट के समय तक युद्ध करता रहा और एक के बाद एक नरेशों को पराजित कर दिया।

खोट्टिग

कृष्ण तृतीय के पश्चात उसका भाई खोट्टिग सिंहासन पर बैठा। वह अपने भाई के तरह इतना शक्तिशाली नहीं था और जिस समय गद्दी पर बैठा उस समय उसकी आयु काफी हो गई था। वह वृद्ध हो चुका था। उसके समय में परमार वंश बहुत शक्तिशाली हो गया था। सीयक ने उस पर आक्रमण करके उसे मार डाला और राजधानी को खूब लूटा। इस समय से राष्ट्रकूट का पतन काल आरम्भ हो गया था।

कंक II

खोट्टिग का भतीजा कर्क द्वितीय राष्ट्रकूट के सिंहासन पर बैठा। इस समय राष्ट्रकूट राज्य की अवस्था अच्छी नहीं थी। चारों ओर से शत्रुओं ने आक्रमण करना आरम्भ कर दिया था और इस समय कोई भी सुयोग्य उत्तराधिकारी नहीं था जो कि इस भयंकर अवस्था का सामना करता।

खर्दा लेख के अनुसार कर्क द्वितीय ने कुछ राजाओं को अपने बल से आतंकित कर दिया था और हूणों का सामना किया लेकिन इन्हें कुछ अविश्वासनीय बोध होता है। यदि कर्क द्वितीय शक्तिशाली शासक होता तो राष्ट्रकूट वंश का पतन इतनी जल्दी क्यों हो जाता। इससे सिद्ध हो जाता है कि वह कमजोर शासक था। इस प्रकार राष्ट्रकूट वंश का अन्त हो गया।

Administration of Rashtrakuta

प्राचीन काल के नियम अनुसार सम्राज्य की सम्पूर्ण दृष्टिकोण से राजा का स्थान सर्वोच्च होता था। उसका पद पैतृक होता था। पहला अधिकार बड़े पुत्र का होता था फिर छोटा का स्थान।

राष्ट्रकूट इतिहास में सिंहासन के लिये भाई-भाई में युद्ध का प्रमाण मिलता है। गोविंद तृतीय और उसका भाई स्तम्भ का युद्ध उदाहरण के रुप में मिलता है। कोई पुत्र न होने पर भाई या चाचा सिंहासन का अधिकार होता था।

जैसे दन्तिदुर्ग का कोई पुत्र न होने से उसका चाचा सिंहासन पर बैठा और ध्रुव अपने भाई गोविन्द द्वितीय की हत्या करके सिंहासन पर बैठा। छोटी अवस्था में भी राज्य का अधिकारी होता था। किन्तु किसी अपने वंश के नरेश के संरक्षक में राज्य करता था। जैसे अमोघवर्ष

६ वर्ष में राज्य गद्दी पर बैठा था। इससे प्रतीत होता है कि इसमें प्रजा का कोई हाथ न था।

राज्य के विभाग:—

राष्ट्रकूट लेख से बोध होता है कि सम्पूर्ण राज्य कई प्रान्त में विभक्त था जैसे:-Rashtrapatis, Vishayapatis और Gramakutas.

1. Rashtra का प्रधान राजा होता था। जो Vishaya से बड़ा विभाग होता था।

2. Vishaya जो कि Rashtra से छोटा विभाग था। इसका प्रधान प्रान्तीय शासक होता था। इसे Vishayapati भी कहते हैं।

3. Gramakutas जो कि Vishaya से छोट विभाग था। यहाँ पर पंचो के प्रधान को यहाँ का मुखिया बना दिया जाता था। जो कर देता था।

राष्ट्रकूट लेख में Bhukti शब्द आता है। यह भी एक विभाग था। जिसके अन्तर्गत 100 से 500 गाँव आता था। इसके प्रधान को Bhogapati के नाम से पुकारा जाता था। Bhukti Gramakuta से बड़ा विभाग था।

राजा और उसका मंत्री:—

मंत्रियो का प्रधान और राष्ट्र का गौरव राजा था। राजा का चुनाव प्रजा द्वारा नहीं होता बल्कि वंशनुगता। मंत्रियों का चुनाव राजा द्वारा होता था। युवराज भी होता था। युवराज प्रान्तीय शासक के रुप में कार्य करता था।

हिन्दू राजत्व के अनुसार मंत्री राज्य रुपी रथ का पहिया (Wheel) होता है। राष्ट्रकूट वंश के युवराज और अन्य राजकुमारो

को उच्च पदों में नियुक्त किया जाता था। कभी-कभी राजकुमारों को सैनिक के प्रधान पदों में नियुक्त किया जाता था। यह राज्य का मुख्य अंग होता था। राष्ट्रकूट में पुरोहित के नाम का उल्लेख नहीं मिलता किन्तु कवि और ज्योतिषी का स्थान था।

इसके अलावा राजा का Private secretary भी होता था। कुछ महामात्रयो का उल्लेख मिलता है। जैसे Grama-mahattaras, Vishayamahattaras और Rashtra mahattaras महामात्र जो कि स्थान विशेष प्रधान होता था। वे ग्राम जिले, और प्रान्तों की देख रेख करता था।

राष्ट्रकूट नरेश महाराजाधिराज, परमभट्टारक आदि उपाधियाँ धारण करते थे। उनके दरबार में मंत्री, सामन्त (युवराज), उच्चपदाधिकारी (महामात्र), राजदूत कवि- ज्योतिषी सभी उपस्थित होते थे।

राष्ट्र सम्राट को सहायता देने के लिए मन्त्रि मण्डल होता था। मन्त्रि मण्डल में कितने मंत्री होते थे और उनके अधीन कौन-कौन विभाग होते थे यह कहना कठिन है। परन्तु अनुमान लगता है कि इस मन्त्रि मण्डल में महामात्य, सेनापति, महासन्धिविग्रहिक, भाण्डागारिक, महाक्षपटलिक, पुरोहित और अन्य कुछ अमात्य रहते होगे। यह सब राजा के आदेश अनुसार चलते थे। बिना राजा के आदेश से वे कोई कुछ नहीं कर सकता था।

सैन संगठन:—

राजा की सभा में यह सब मन्त्रीगण एकत्र हो करके समस्याओं को सुलझाते थे। युद्ध के समय सब मंत्री युद्ध में जाते थे। कभी कभी युद्ध में राजा प्रधान मंत्री का पद ग्रहण करके युद्ध में सैनिको के प्रथम पंक्तियों में विराजमान होता था।

उस समय सेना संगठन के ऊपर बड़ा ध्यान दिया जाता था। क्यों कि उस समय सम्राट का मुख्य उद्देश्य राज्य का विस्तार करना था। जिस

के पास जितना सबल सैनिक होता वही बलवान सम्राट समझा जाता था। राष्ट्रकूट सम्राटों का समय युद्ध में ही व्यतीत हुआ। अपने साम्राज्य की रक्षा, शत्रुओं का नाश, विदेशी प्रदेशों पर विजय तथा "एकराट" बनने के लिये राष्ट्रकूट सम्राट के पास एक विशाल सेना थी। Dr. Altekar के अनुसार इस विशाल सेना की संख्या कम से कम ५ लाख थी। इस सैनिकों के प्रधान पदों पर सम्राट के सम्बन्धी लोगों को ही नियुक्त करते थे। ताकि उन सैनिकों में किसी प्रकार का विश्वासघात की भावना न उत्पन्न हो सके।

सैनिक विभाग:—

इस समय सैनिक का अलग विभाग था। जिसमें सैनिकों का निर्वाचन उसका नियंत्रण सुचारु रूप से होता था। कृष्ण तृतीय के समय malkhed पर एक सैनिक छावनी थी जिसमें केवल सैनिक लोग रहते थे और हर समय युद्ध करने के लिये प्रस्तुत रहता था। मुसलमान लेखकों के अनुसार राष्ट्रकूट सैनिकों में घुड़सवार, रथ और हाथी बहुत प्रसिद्ध थे।

राष्ट्रकूट सैनिक विभाग में घुड़सवार, हाथी-रथ और पैदल का अलग-अलग विभाग होता था और उसका निरीक्षण अलग-अलग व्यक्ति द्वारा होता था। Al Masudi says about the Balahra i. e. the Rashtrakutas King "His horses and elephants are innumerable but his troops are mostly infantry because the seat of his government is mostly among mountains".

पैदल सेना :—

इस विभाग में जिन व्यक्तियों को नियुक्त किया जाता था वे प्राय: पहाड़ी जाति का होता था। क्योंकि वे लोग काफी मेहनती होते थे तथा

काफी दूर तक पैदल चल सकते थे। इनकी संख्या अन्य सेना सेना से अधिक होती थी

घुड़ सेना :-

इस विभाग के अन्तर्गत जो घोड़ा युद्ध के लिये लाया जाता था वे Arabian horse होता था। इस विभाग में राजा स्वयं घोड़ों को अरब से मगाते थे According to Dr. Altekar "Govinda II was a great horse man and the lightning all India movements of Dhruva, Govinda III and Indra III presuppose a strong cavalry"

हस्थि सेना :—

इसमें तरह-तरह के हस्थि होते थे और आयु के अनुसार उसको युद्ध में व्यवहार किया जाता था। राजा जिस हस्थि पर चढ़ कर युद्ध करने जाते थे उस हस्थि को खूब सजाते थे। राष्ट्रकूट शासक विदेशों से हस्थि को मगाते थे।

सैनिक विभाग में हर जाति तथा हर वर्ण के लोगों को नियुक्त किया जाता था। ब्राह्मण लोगों को भी सैन कार्य में नियुक्त किया जाता था तथा वे युद्ध में जाते थे। कृष्ण तृतीय के Bettegiri लेख के अनुसार एक ब्राह्मण Ganaramma ने युद्ध में अपना जावन वलिदान कर दिया।

सैनिकों को राज्य की ओर से अनेक सुविधायें प्राप्त थीं। जिस समय वे सैनिक युद्ध में जाते थे तो उसको अलग भत्ता दिया जाता था। मृत सैनिकों के परिवारों को राज्य की ओर से आर्थिक सहायता दिया जाता था।

दुर्ग, नौसेना, युद्ध के हथियार :—

राष्ट्रकूट शासन व्यवस्था के आधार पर दुर्ग निर्माण, सुरक्षा और उसमें सैनिकों के रहने के लिये भी राज्य की ओर से सुव्यवस्था किया जाता था।

नौसेना की व्यवस्था भी होती थी। इसका अलग विभाग होता था। युद्ध में धनुष, बाण, तलवार आदि का प्रयोग करते थे। उस समय बड़े-बड़े पत्थर शत्रुओं में फेंका जाता था।

Revenue and Expenditure:

राष्ट्रकूट शासन व्यवस्था को सुचार रुप से चलाने के लिए कुछ करो की व्यवस्था राज्य कि ओर से निहित कर दी गई थी। Dr. Altekar के अनुसार राज्य की आय निम्न मुख्य साधनों द्वारा होती थी :--

1 Regular taxes.
2 Occasional taxes.
3 Fines.
4 Income from government properties.

1 Regular Taxes:--

यह कर गांव तथा प्रान्तो से प्राप्त होता था। यह ठीक समय पर राजा को दिया जाता था। इसके अन्तर्गत दो शब्द आता है।

(i) Udrang.
(ii) Uparikara.

इन शब्दों से यह बोध होता है कि यह भूमि कर के रुप में रुप में दिया जाता है।

(iii) Bhogakara.

इसमें अल्प कर रोज दिया जाता था। इसके अन्तंगत रकम से न देकर उपजाऊ चीज भेजा जाता था। जैसे फल, मूल आदि।

(iv) Bhutopallapratyaya

इसके अन्तंगत उन चीजों से कर मिलता था जो सामान बाहर से आता या जाता था उस पर तथा नूतन वस्तु पर और विक्रय की वस्तुओं से भी कर मिलता था। इसके अलावा अनेक करो कि व्यवस्था थी। जैसे क्रय-विक्रय की वस्तुओ पर पृथक रूप से कर और चुंगी लगता था।

Occasional taxes:—

यह कभी कभी ली जाती थी। जैसे अगर कोई सैन दल आ गया या कोई युद्ध छिड़ गया तो सम्राट गांव से उन सैनिको की खर्चा के लिए कर मगता था।

Fines:-

यह दंड के रूप में लिया जाता था।

Income from government properties:--

ऊजड़ भूमि, पेड़, राजा का भूमि से आया। सूखे पेड़ के विक्रय से आय, मंदिरों, मकानों से कर लिये जाते थे।

राज्य के बागों, वनों, खानों, तथा क्रय विक्रय की वस्तुओं पर चुंगी लगता था। सड़कों और नदियो पर गुजरने वाले माल पर चुंगी लगता था और उसके लिए अफसर होते थे।

सामन्त शासक

राष्ट्रकूट शासन की सुविधा के लिए अनेक सामन्तों में विभाजित था इसके अन्तंगत 5 या 6 प्रान्त होते थे। राजधानी के समीपस्थ स्थानों का शासन राजा स्वयं करता था किन्तु सामन्त का प्रबन्ध राज-

कुलीय "युवराज" करते थे। Banavasi के सामन्त शासक Dhruva को Marakka rasa और Govinda तृतीय को Rajaditya raja-paramesvara के नाम से पुकारा जाता था। ये सामन्त अपने साम्राट को नियमित रूप से कर देते थे। आवश्यकता पड़ने पर उसे सैनिक सहायता देते थे और उनकी ओर से युद्ध करने स्वयं जाते थे। अगर वह सम्राट के प्रति स्वामी भक्ति का व्यवहार नहीं करता था तो वह किसी प्रकार से राज्यो के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं कर पाता था। सामन्तों को अपने राज्यों में हर प्रकार की छूट थी।

Vishayapatis:—राष्ट्रकूट शासन व्यवस्था के आधार पर Vishayapaties का चुनाव राजा स्वयं करता था जैसे Belvolaशासक का नियुक्त अमोघवर्ष प्रथम स्वयं ने किया। उनका मुख्य कार्य कर आदि ठीक समय में भेजना। जिला या Vishayas का शासन व्यवस्था Vishayapati स्वयं करता था। प्रांतीय शासन साम्राट के अधीन कर्मचारी के रूप में कार्य करते थे। राजा उनकी गतिविधि की चरों की सहायता से जानकारी रखता था। Vishayas को कुछ विभागों में विभक्त था। जिसे Bhuktis के नाम से जानते हैं। इसके अन्तर्गत 100 या 500 गांव आते हैं। Bhuktis का प्रधान Bhogapati अन्तर्गत होता था। वह सम्पूर्ण गाँव को अपने अधीन में रख कर उसकी देख-रेखकरता था।

ग्राम शासन

राष्ट्रकूट शासन की निम्नतम इकाई ग्राम था। जिसका प्रबन्ध ग्राम वृद्धों की सहायता से ग्रामिक करता था या गाँव मुखिया भी होता था। इस समय गाँव में शान्ति नहीं थी क्योंकि हर समय युद्ध करना पड़ता था। राजा ग्रामों की उन्नति के लिए हर प्रकार की सुविधा प्रदान करना अपना कर्तव्य समझता था।

राष्ट्रकूट की शासन व्यवस्था बहुत ही सुव्यवस्थि थी। युद्ध के समय सामन्त, प्रान्त, विशयपति, भूकती तथा गाँव के लोग सब मिलकर राजा को हर तरफ से सहायता देते थे और वे अपनी-अपनी सेनाये भेजते थे।

Dr. Altekar के अनुसार "The Rashtrakuta administration was certainly efficient................the Rastrakuta subjects, however, enjoyed a substantial amount of self government........the moral welfare was also looked after........"

———

सेन्नुचन्द्र II के समय से इस वंश का उदय होता है किन्तु भिल्लम ने इस राज्य की स्थिति को सुदृढ़ किया ।

Gencalogy of the Yadavas of Devagiri

भिल्लम V (1187-11 91 A. D.)
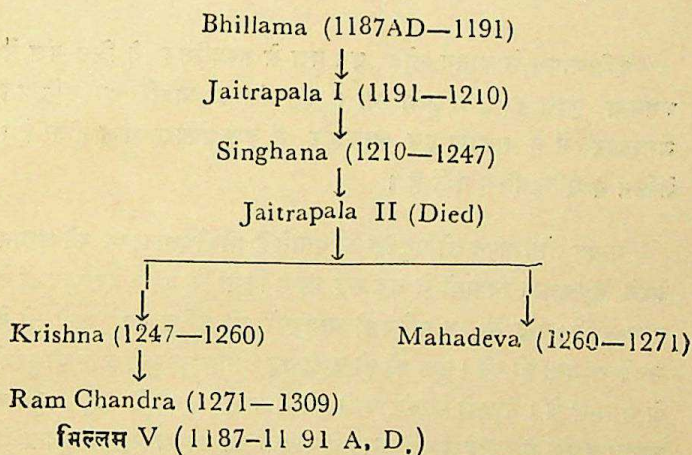
भिल्लम V ने अपने समय में सोमेश्वर IV से कृष्णा नदी के उत्तर वर्ती प्रान्त छीन लिया और अपनी राजधानी देवगिरि में बनवाई। उसने अपने राज्य को सुदृढ़ बनाने के लिये चालुक्य साम्राज्य के केन्द्रीय प्रदेश को अपने अधीन कर लिया। उसने पहले से ही आस पास के छोटे-छोटे सरदारों को दबा रखा था। इस प्रकार उसने पश्चिमी घाट के सरदारों को भी अपने आधीन करने के लिये बाध्य किया। उसने ने राज्यकाल में होयसल नरेश वीर बल्लाल पर आक्रमण किया सफलता प्राप्त न हुई। अन्त में उसकी मृत्यु वीर बल्लाल के ई। उसने अपने राज्य को सुदृढ़ तथा विस्तृत करने के लिये ो उत्सर्ग कर दिया। कहा जाता है कि यह युद्ध Dhar- ꠀkkigundi पर हुआ था। इस युद्ध में भिल्लम के पुत्र

देवगिरि के यादव

दक्षिणापथ के यादव लोग उस वंश से सम्बन्धित है जिस वंश में भगवान कृष्ण का जन्म हुआ था। इस वंश का प्रारम्भिक इतिहास अन्धकार में है तथापि इस अन्धकार में कुछ प्रकाश प्राप्त होता है। लेकिन वे एतिहासिक नहीं है।

यादव लोग अपने को यदुवंश का बताते हैं प्राचीनताम्रपत्र को अध्यन करने के पश्चात विद्वानों ने यह मत प्रकट किया कि पहले वेराष्ट्रकूटों के सामन्त थे। बाद में जब पश्चिमी चालुक्यो की शक्ति बढ़ने लगी तो वे उनके सामन्त हो गये। कुछ भी हो पहले यह लोग राष्ट्रकूटों और चालुक्यों के सामन्त थे। यादवों के वंशावली को आध्यन करने से यह अनुमान लगता है कि सेन्नुचन्द्र II क समय से यादवों का उत्कर्ष हुआ सेन्नुचन्द्र 1I के पूर्व कुछ नाम प्राप्त होते हैं किन्तु उनके बारे में कोई ज्ञान प्राप्त नहीं होता है। जिस समय चालुक्यो का पतन हो रहा था। उस समय विक्रमादित्य V के शासन काल में सेन्नुचन्द्र को चालुक्य राज्य के सम्पूर्ण उत्तरी प्रदेश का शासक नियुक्त किया। उनके द्वारा उनसे सहायता प्राप्त करने के लिये उन्हें स्वतन्त्र कर दिया था। सेन्नुचन्द्र का शासन खान देश पर था। विक्रमादित्य V की मृत्यु के पश्चात उसने अपनी शक्ति को बढ़ाया और अपने साम्राज्य को विस्तृत किया। इस प्र इस साम्राज्य का उदय सेन्नुचन्द्र के समय से हुआ।

सेन्नुचन्द्र II के पश्चात उसका पुत्र Parammadeva Simha उसके बाद Mallugi का नाम उल्लेख है V इतिहास अन्धकार है।

जैत्रसिंह ने अपने पिता को सहायता दिया था Dr. Bhandarkar के अनुसार "the right arm of Bhillama."

जैत्रपाल Jajtrapala I (1191-1210 A.D.)

भिल्लम की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र जैत्रपाल देवगिरि के सिंहासन पर बैठा। भिल्लिम के समय में इसने अपने पिता को युद्ध में सहायता दिया था। इससे अनुमान लगता है कि सिंहासन पर आने से पूर्व उसने बहुत से युद्धों में भाग लिया था। इसीलिये वह युद्ध में दक्ष था। उसने अपनी शक्ति के द्वाराअनेक राजाओं को पराजित किया।

सबसे पहले उसने काकतीय के राजा रुद्रदेव पर आक्रमण किया और उसको युद्ध में मार डाला। जैत्रपाल ने अपने भतीजे गण-पति को काकतीय सिंहासन पर विठाया।

Dr. Bhandarkar ने Rajaprasaste I के लेख आधार पर वर्णन करते हैं " He assumed the sacrifical vow on the holy ground of the battle field and throwing a great many kings into the fire of his prowess by means of ladles of his weapons perfomed a human sacrifice by immolating a victim in the shape of the fierce Rudra, the lord of the Tailangas. and vanquished the three worlds."*

---

*दीक्षित्वा रणरङ्गदेवयजने प्रोदस्तशस्त्रस्त्रु वः
श्रेणीभिर्जगतीन्हुतवता येन प्रतापनले।
तैलिङ्गधिपतेः पशोर्विशसनं रौद्रस्य राद्राकृतेः
कृत्वा पुरुषमेधयविधिना लब्धास्त्रिलोकीजयः॥

(Rajaprasasti I)

जैत्रपाल न केवल एक योद्धा ही था बल्कि एक विद्वान भी था। वह चारों वेदों और तर्क तथा मीमांसा शास्त्रों का पण्डित था। जैत्तपाल ने अपने राज्यकाल में महान गणितज्ञ भास्कराचार्य के पुत्र लक्ष्मीधर को अपना राजकवि बनाया।

Dr: Bhandarkar के अनुसार "Lakshmidhara, the sno of the celelrated mathematician and astronomer. Bhaskracharya, was in the service of Jaitrapal and was placed by him at the hrad of all leaened Pandits" उसके राज्य में अनेक बड़े बड़े पन्डित रहते थे। जैत्रपाल उन पन्डितों के साथ वाद विवाद करते थे। उन्होंने अनेक ग्रन्थ की रचना किया था। उसने 1191A.D. to 1210A.D. तक राज्य किया।

सिंहण (1210—1247 A.D.)

जैत्रपाल के मृत्यु के पाश्चात् उसका पुत्र सिंहण राज गद्दी पर बैठा उसके समय में देवगिरि के यादवों का राज्य काफी दूर तक विस्तृत हो गया था और उसका गौरव चरमोत्कर्ष पर पहुँच गया। गौरव प्राप्त करने के लिए सिंहण ने अनेक राजाओं के साथ युद्ध किया। सर्व प्रथम उसने राजा Rajjala से युद्ध किया और उसका हाथी छीन लिया। इसके बाद उसने Kakkula से राज्य छीन लिया फिर राजा Arjuna को ध्वंश किया। सम्भवत: यह Malva पर राज्य कर रहे थे। और Bhoja को बन्दी बना लिया।

सिंहण ने Bhangariga के नरेश लक्ष्मीधर तथा Dhara के साथ शासक को भी पराजित कर दिया। सिंहण ने मथुरा और काशी के राजाओं को युद्ध में मार डाला।

Dr: Bhandarkar ने Raja Prasasti I के लेख के आधार पर इस प्रकार वर्णन किया।

"King Lakshmidhara the lion of Bhangariga, was reduced, the ruler of Dhara was besieged by means of troops of horses, and the whole of the country in the possession of Ballala was taken. All this was but a child's play to King Singhana."*

सिंहण ने दो बार गुजरात पर आक्रमण किया और बल्लाल II के विरुद्ध युद्ध छेड़कर उनसे मालप्रभा तथा कृष्णा नदियों के दक्षिण में काफी विस्तृत भूमि छीन ली। बल्लाल के उत्तराधिकारी नरसिंह II को भी सागरतुलुक तथा बेलारी के जिले सिंहण को दे देना पड़ा तथा सिंहण के अधीनता को स्वीकार करना पड़ा।

होयसल नरेश सोमेश्वर ने आपने पिता तथा पितामह द्वारा खोये हुए प्रदेशों को प्राप्त करने के लिये पण्ढरपुर तक बढ़ आया, किन्तु सिंहण के सेनापति बीचन ने उसका एक भी चलने न दिया। बीचन ने सोमेश्वर के सेनाओं को बुरी तरह पराजित कर दिया। सोमेश्वर विवश होकर लौट गया। बीचन की सेना कावेरी तक पहुँच गई थी। सिंहण ने काकतीय राजा गणपति के साथ युद्ध किया और उसे भी पराजित किया।

सिंहण ने गुजरात पर दो बार आक्रमण किये। उसके आक्रमण से गजरात सैनिक भयभीत होते थे। सिंहण की सेना Tapi नदी के किनारे तक पहुँच गयी थी।

दक्षिण विजय:—सिंहण ने अपने शासन काल में Bichana नामक

---

*येनानीयत मत्तवारणघटा यज्जल्लभूमिभृत:
कक्कू लादवनीपतेरपहृता येनाधिराडचश्रिय: ।
येनणीभृदर्जुनोपि विलना नीत: कथाशेषतां
येनोद्दामभुजेन भोजनृपति: काराकुटुम्बीकृत: ।।

एक व्यक्ति को दक्षिण प्रान्त का Governor नियुक्त किया था जो उसका Aiceroy था। Bichana के पिता का नाम Chikka और भाई का नाम Malla था। Bichana सिंहण के सैनिको के साथ मिल कर दक्षिण पर अपने प्रभु के शत्रुओं के साथ युद्ध किया था। लेकिन किसी भी स्थान पर शत्रुओं का नाम उल्लेख नहीं है।

सिंहण अपने पिता की तरह विद्वानों का आदर करता था। उसने भी भास्कराचार्य के वंशजों का समादर करना जारी रखा।

उसके राज्य में छाँगदेव नामक ज्योतिषज्ञ रहता था जो कि भास्कराचार्य का पौत्र तथा लक्ष्मीधर का पुत्र था। सिंहग ने पातना में एक विद्यालय खोला था। छाँगदेव उसकी देख रेख करता था। उस विद्यालय में भास्कराचार्य के "सिद्धाणतशिरोमणि तथा अन्य ग्रन्थ पढ़ाये जाते थे। सिंहण स्वयं एक विद्वान था। उसने संगीत साहित्य के ऊपर एक टीका प्रस्तुत किया था। सिंहण ने Prithviva-llabha की उपाधी धारण किया था। उसने अपने शासन काल में न केवल युद्ध ही किया वल्कि कला निर्माण, कार्य, धर्म विषयों पर भी योग दान दिया। उसने ८४ दुर्ग निर्माण किया था। वह एक धर्मी व्यक्ति भी था किन्तु उसका व्यक्तिगत धर्म क्या था यह प्रश्न अज्ञात है। कुछ भी हो वह एक नीतिकुशल शासक था। उसने अनेक दान भी दिया।

कृष्ण (1247-1260 A. D.)

सिंहण के बाद उसका पौत्र कृष्ण सिंहासन पर बैठा। सिंहण के पुत्र की मृत्यु उसके शासन काल में हो गयी थी। उसके पुत्र का नाम जैतुगी था। जैतुगी के दो पुत्र थे। प्रथम का नाम कृष्ण और दूसरे का नाम महादेवी था। कृष्ण का Prakrit नाम Kanhara या Kand-hara था।

कृष्ण एक शान्ति प्रिय और दयालु होने के साथ साथ एक योद्धा भी था। उसने अपने राज्य काल में मालवा, गुजरात तथा कोंकण के राजाओं से युद्ध किया और इन राजाओं को भयत्रासत कर रखा था। उन्होंने अनेक शत्रुओं को पराजित किया। कृष्ण ब्राम्हण धर्म का परम अनुयायी था। उसने अनेक यज्ञ किया था। चूँकि उसका ध्यान वैदिक धर्म की ओर ज्यादा हो गया था। इस कारण प्रजा के प्रति कठोरता घटती गई। Dr Bhandarkar अनुसार "brought fresh strength to the vedic ceremonial religion which in the course of time had lost its hold over the people."

वह एक विद्वान भी था तथा विद्वानों का आदर करता था। कृष्ण के शासन काल में उसके मंत्री जल्हण ने 'सूक्ति-मुक्तावली' नामक ग्रन्थ में सूक्तियों का संकलन किया और अमलानन्द ने 'वेदान्त-कल्पतरु' नामक टीका लिखा।

महादेव (१२६०-१२७१)

यादव वंश का एक शक्तिशाली नरेश महादेव अपने भाई कृष्ण के पश्चात सिंहासन पर बैठा। उसने शत्रुओं को बुरी तरह पराजित किया।

Dr. Bhandarkar ने Rajaprasasti I के आधारपर इस प्रकार वर्णन किया है।

"He was a tempestuous wind that blew away the heap of cotton in the shape of the king of the Tailange country, the prowess of his arm was like a thunderbolt that shattered the mountain in the shape of the pride of swaggering Gurjara, he destroyed the king Konkan with

ease and reduced the arrogant sovereigns of Karnata and Lata to mockery."*

महादेव सर्वप्रथम उत्तरी कोंकण पर आक्रमण पर करके शिलाहार वंशीय सोमेश्वर को पराजित कर दिया और उससे उत्तरी कोंकण छीन लिया।

महादेव ने कर्णाट तथा लाट का दमन किया। महादेव ने उन राज्य के शासकों का गौरव चूर्ण कर दिया तथा उन दृप्त नृपतियों को हास्यास्पद किया।

महादेव काकतीय पर आक्रमण किया और काकतीय रानी रुद्राम्बा को संत्रस्त्र कर दिया। कुछ विद्वानों का मत है कि उसको पराजित कर अपने राज्य में मिला लिया।

महादेव ने कभी स्त्रियों तथा शिशुओं पर हाथ नहीं उठाया। भृत Andhra वासी इस बात का फायदा उठाते हुये अपने राज्य में स्त्री को राज गद्दी पर बैठाया और मालवा के राजा ने भी इसी कारण से अपने राज्य में शिशु को राजगद्दी पर बैठाया।

Dr. Bhandarkar ने Rajaprasati II के लेख के आधार पर इस प्रकार वर्ण करते हैं:—

"King Mahadeva never killed a woman, a child or one who submitted to him; knowing this and being

---

*तैलिङ्कछितिपालतूलानिचय प्रक्षेप चण्डानिलो
गर्जद्गूर्जर गर्व पर्वतभिदादम्भोविदोर्विक्रमः।
हेलोन्मूलित कौङ्कणक्षितिपतिः कणटिलाटोद्भव
क्षोणीपालविडम्बनः स हि महादेवः कथ वर्ण्येते।

(Rajaprasati I st 48 and II st 13)

greatly afraid of him, the Andhras placed a woman on the throne, and the king of Malava also for the same reason installed a child in his position, and forth with renouncing all his possesions, practised false penance for a long time."*

महादेव एक कलाप्रेमी तथा विद्वानों का आदर करने वाला था। उसके समय में कला और विद्या की खूब उन्नति हुयी। हेमाद्रि महादेव का मन्त्री था जो कि हिन्दू धर्मशास्त्र सम्बन्धी अपने ग्रन्थों के लिए प्रसिद्ध था। उसने 'चतुर्वर्ग-चिन्तामणि' ग्रन्थ की रचना किया था।

उसने अनेक मन्दिरों का निर्माण कराया जो कि वास्तुकला के दृष्टिकोंण से अपूर्व था। जिस कारण उसके नाम से एक विशिष्ट शैली चल पड़ी। इस शैली कानाम 'हेमदपन्थि' था। महादेव एक धार्मिक व्यक्ति भी था। उसने हिन्दू धर्म के सम्वन्ध में कई ग्रन्थ लिखी। जिनमें 'चतुर्वर्ग चिन्तामणि' सबसे प्रसिद्ध है। लेकिन उसके व्यक्तिगत धर्म के बारे में ज्ञान प्राप्त नहीं। कुछ बिद्वानों का मत हैं कि वह ब्राह्मण धर्म के मानने वाले थे, कुछ कहते हैं कि वह जैन धर्म के मानने वाले थे।

रामचन्द्र (1271—1309 AD)

महादेव के पश्चात् उसका भतीजा रामचन्द्र सिहासन पर बैठा। रामचन्द्र कृष्ण का पुत्र था। वह बहुत ही शक्तिशाली व्यक्ति था। Thana Copper plate में रामचन्द्र को इस प्रकार से कहा "a lion to the

---

* अयं शिशुस्त्रीशरणागतानां हन्ता महादेवनृपो न जातु:
इत्थं विनिश्चित्य ततोतिभीतैरन्ध्रै: पुरन्ध्री: निहिता तपत्वे ॥
अत एव हि माल्वेश्वर: शिशुमेव स्वपदे न्यवेशयत्
स्वमांशु विहाय संपद: कपटेनैव चिरं तपस्यति ॥
(Raja prasasti II st 14&15)

proud elephant in the shape of the lord of malava"
इस लेख के अनुसार उसनेमालवा और काकतीय वंश के शासकों के साथ युद्ध किये किन्तु युद्ध में कौन विजयी हुआ यह स्पष्ट रूप से वर्णन नहीं है।

मुसलमानों से युद्ध

रामचन्द्र के शासन काल में मुसलमानों का आक्रमण हुआ। इस समय रामचन्द्र अन्तिम स्वतंत्र हिन्दू शासक था जो कि दक्षिण में राज्य कर रहा था। मुसलमानों ने दिल्ली में अपना राज्य स्थापित करने के पश्चात् दक्षिण की ओर दृष्टि डाली। इस समय वहाँ पर रामचन्द्र राज्य कर रहा था। करा के शासक अलाउद्दीन खिलजी ८००० सनिकों को लेकर दक्षिण की ओर बढ़ा। वह बहुत ही शक्तिशाली शासक था। उसने अचानक यादवों की राजधानी देवगिरि को घेर लिया और रामचन्द्र के ऊपर आक्रमण कर दिया।

रामचन्द्र इस भयंकर शक्ति को देखकर भयभीत हो गया और कोई उपाय न देखकर दुर्ग में आश्रय लिया। कुछ विद्वानों के अनुसार रामचन्द्र राजधानी से भाग निकला था और उसने ४००० सैनीक इकट्ठा करके आक्रमणकारियों के ऊपर हमला कर दिया। कुछ समय तक वह युद्ध करता रहा किन्तु बहुत दिनों तक राजधानी को पराधीनता से बचा न सका। इस युद्ध में रामचन्द्र का पुत्र शंकर ने भी सहायता किया किन्तु राजधानी शत्रुओं के हाथ में आ गयी थी। सारे प्रयत्न निष्फल हुए और अन्त में रामचन्द्र को मुसलमानों के आगे सर झुकाना ही पड़ा। अलाउद्दीन ने देवगिरि को खूब लुटा। रामच द्र ने अलाउद्दीन को "६०० मन मोती, २ मन रत्न, १००० मन चाँदी, ४००० मन रेशमी टुकड़े वार्षिक कर देना स्वीकार किया। रामचन्द्र कुछ दिनों तक तो कर देता रहा। अन्त में उसने कर देना बन्द कर दिया। इस पर अलाउद्दीन नाराज होकर अपने सेनापति मलिक काफूर को ३०,०००

सैनिकों के साथ देवगिर भेजा। मलिक काफूर बहुत ही कठिनाइयों के साथ देवगिरि आ पहुँचा। रामचन्द्र और मलिक काफूर के साथ युद्ध छिड़ गया। अन्त में काफूर ने रामचन्द्र को बन्दी करके दिल्ली लाया और वह ७ महीने तक बन्दी रहा। अन्त में अलाउद्दीन ने उसे मुक्त कर स्वामि भक्त बना लिया। रामचन्द्र के मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र शंकर उत्तराधिकारी बना। उसने भी कर भेजना बन्द कर दिया। इस पर मलिक काफूर दुबारा देवगिरि आया और शंकर पर आक्रमण करके उसे मार डाला। इस प्रकार यादव कुल का अन्त हो गया।

Hemadri

Hemadri महादेव का मन्त्री था। उसने महादेव के राज्यकाल में रह कर अनेक धर्मशास्त्र की रचना किया था। वह एक महान विद्वान था। वह रामचन्द्र के काल में भी था। उसके द्वारा धर्मशास्त्र की रचना के आधार पर उसे महादेव का 'Srikaranadhipa या "Sri-karanaprabhu" से नुकारा जाता था।

Thana Copper plate के आधार पर उसको इस प्रकार वर्णन किया है कि "to have taken upon himsalf the 'adhipatya' or Controllership of all 'Karana."

Hemadri को "Mantrin" या "Counsellor generally" से पुकारा जाता था। Hemadri ब्राह्मण और vatsa गोत्र का था। उसके पिता का नाम Kamadeva और बाबा का नाम Vasudeva. वह बड़ा विद्वान, धार्मिक और साहसी व्यक्ति था तथा राज्य के कार्य में भी निपुर्ण था। इसने अनेक युद्ध और राज्य के इतिहासिक विषय पर अनेक पुस्तक रचना किया था।

Chintamani

यह एक महान विद्वान था। इन्होंने अनेक ग्रन्थों का रचना किया था। इनके ग्रन्थों को Chaturvarga Chintamani के नाम से

पुकारा जाता है। जो कि चार भागों से विभक्त था। प्रथम भाग का नाम "vratakhanda" है। जिसके अन्तर्गत धार्मिक विषयों का उल्लेख किया गया है। दूसरा भाग का नाम Danakhanda इसमें दान के विषय पर वर्णन है जो धर्म के हेतु दिया जाता था।तीसरा भाग का नाम Tirthakhanda है। जिसमें तीर्थ यात्रा के विषय पर वर्णन है। चौथा भाग का नाम Mokshakhanda इसके अन्तर्गत मोक्ष के विषय में वर्णन किया गया कि किस तरह मनुष्य की मोक्ष प्राप्त हो सकती है। उन्होंने अनेक अन्य विषयों पर ग्रन्थों का रचना किया था। यह महान पंडित महादेव और रामचन्द्र के दरबार में थे।

कदम्ब कूल

परिचय—कदम्कुल के उत्पत्ति के बारे में अनेक कहानियाँ प्राप्त होती हैं। इस कूल की उत्पत्ति के बारे में यह कहा जाता है कि उनका सम्बन्ध कदम्ब पेड़ से है। कदम्ब पेड़ के नीचे तीन नेत्र और चार हाथवाले एक व्यक्ति का जन्म हुआ जो कि शिव के कपाल के पसिने कदम्ब पेढ़ के नीचे भूमि पर गिरने से इसका जन्स हुआ जो कि कदम्ब पेड़ से सम्बन्धित था। इस प्रकार कदम्ब कुल की उत्पत्ति का आरम्भ हुआ इसी कदम्ब कुल में सबसे पहले Mayuravarmma का उदय हुआ। एक दूसरी कहानी से यह बोध होता है कि Mayuravarmma का जन्म कदम्ब पेड़ के नीचे Rudra से हुआ था।

George M. Moraes के अनुसार:—As he was with as eye in his forehead, the crown was not bound there as it would cover it up, but it was bound on him near his knee, where it would show well As he grew up in the thick shade of Kadamba tree, his family became the Kadamba family."

अन्य एक कहानी से यह ज्ञान होता है कि Jaina Tirtan-kara की बहन ने Mayura Varmma को प्रसिद्ध कदम्ब पेड़ के नीचे जन्म दिया था। Talagunda inscription of Santi var-mma के अनुसार कदम्ब ब्राह्मण थे। कदम्ब कुल का संस्थापक मयूरशर्मन था।

Early Kadambas
Vanavsi

(Uchchangi) (Triparvata)

Mayura Sarmma (345—370 A. D.)
↓
Kanga Varmma (370—395)
↓
Bhagiratha (395—420)

- ↓ Raghu (420—430)
- ↓ Kakustha Varmma (430—450)
  - ↓ Kumara Varmma 475
    - ↓ Mandhatri Varmma 490—497
  - ↓ Santi Varmm 450—475
    - ↓ Mrigesa Varmma 475—490
    - ↓ Ravi Varmma 497—537
    - ↓ Hari Varmma 537—547
  - ↓ Krishna Varmma I
    - ↓ Vishnu Varmma (485—497)
      - ↓ Simha Varmma 497—540
      - ↓ Krishna Varmma II 540 - 547
    - ↓ Deva Varmma

Mayurasarmma

यह ब्राह्मण होने के नाते वेद आदि का आध्यन करता था। अपने गुरू virasaJmna के साथ वेद आध्ययन के लिये पल्लव राजधानी काँचि गया। वहाँ पल्लवों द्वारा अपमानित किये जाने पर अपने हाथ में शस्त्र ग्रहण किया। और कर्णाटक में बनावसी को राजधानी बनाया और अपना राज्य स्थापित किया। ककुस्थ वर्मन के तालकुण्डा लेख में इस बात का विवरण इस प्रकार है :—

"वहाँ एक पल्लव अश्वारोहों के साथ घोर कलह से क्षुब्ध होकर उसने (मयूरशर्मा) विचार किया। खेद है कि कलिकाल में ब्राह्मण क्षत्रियों से इतना दुर्वल होने लगे" "तत्र पल्लवाश्व संस्थने कलहेण रोषिता। कलियुगेऽस्मिन्न हो बतक्षत्रात् परिपेलवा विप्रत: यत:।"

मयूर शर्मा ने अपनी शक्ति वढ़ाना आरम्भ किया और karnul जिले तक के क्षेत्र को अपने अधिकार में कर लिया। अपने राज्य के उत्तरी सीमा पर पल्लव शासक के उच्च पदाधिकारियों को भय संत्रस्त कर दिया और पल्लवों के सामन्तों से कर वसूल करने के बाद श्री शैलम के निकट अरण्य में अपनी शक्ति जमा ली। उसकी शक्ति को देखकर पल्लवों ने उससे सन्धि कर ली। कुछ विद्वानों का मत है कि मयूरशर्मा ने पल्लवों पर आक्रमण किया था। उसकी शक्ति को देख कर पल्लवों ने उससे सन्धि कर लिया और उसे बनवासी के निकट की भूमि दे दी।

Kangavarmma

मयुरशर्मा के पुत्र कंगवर्मा गद्दी पर बैठा। Talaguncer लेख के अनुसार उसने अपने समय में अनेकों युद्ध का सामना किया। सब युद्ध में उसको सर्वदा सफलता प्राप्त नहीं हुआ। वाकाटक शासक prithivisena ने भी कंगवर्मा पर आक्रमण किया। कंगवर्मा इस

शक्ति को भी नहीं रोक सका। फलस्वरूप उसके हाथ से कुछ भूभाग निकल गया।

Prithivisena और कंगवर्म समकालीन थे। कंगवर्मा का राज्य काल का समय 360 से 385 A D तक माना जाता है और Prithivisena 350 से 390 A D तक माना जाता है।

इन विद्रोहों से बचने के लिये कदम्बोंने हलसी में अपनी दूसरी राजधानी बनाया।

Bhagiratha

कंगवर्मा का पुत्र Bhagiratha था। स्वयं सागर ने कंदम्ब कुल में जन्म लिया था। उसके पिता कंगवर्मा के समय में जनता बहुत दुःखी हो गयी थी। क्यों कि उस समय बहुत से आक्रमणकारियों ने जनता का सुख छीन लिया था। कुछ विद्वानों का मत है कि Bhagiratha ने इस कुल में जन्म लेकर जनता को सुखी किया। इससे अनुमान लगता है कि वह एक महान विजेता था और अपनी शक्ति के द्वारा कुल का गौरव पुनः प्रतिष्ठा की।

Raghu

Bhagiratha की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र रघु सिंहासन पर बैठा। उसने Raghuparthiva की उपाधी धारण की थी। Tale-gunda लेख के अनुसार उसने शत्रुओं को पराजित किया था। पारम्भीक काल में Raghu को अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा किन्तु उसने अपने पराक्रम के द्वारा इन सब कठिनाईयों पर विजय प्राप्त किया। Halsi grant में उसको वीर योद्धा कहा गया लेकिन उसके शत्रु का नाम कहीं भी उल्लेख नहीं है।

Kakusthavarmma

रघुके मृत्यु के पश्चात् उसका भाई ककुस्थ वर्मा सिंहासन पर बैठा।

उसके समय में कदम्ब कुल का गौरव पराकाष्ट पर पहुँच गई थी। Banavasi के (Dr: Moraes के अनुसार "Calls him the ornament of kadamba family—one who had disti nguished himself in fields of battle, who had won the esteem and love of his people by being kind the needy, by protecting tis Subjects, and by lifting up the humble." उसने दूर दूर के शासकों के साथ सम्बन्ध स्थापित कर लिया था।

वह एक कुशल योद्धा के साथ साथ एक महान शासक भी था। allagunda के अनुसार "the ornament of the kadamba family" and "the sun among kings of wide spread fame."

ककुस्थवर्मा ने शक्तिशाली राजवंशों, गुप्ती, वाकाटकों, तथा पश्चिमी गंगो के साथ विवाह सम्बन्ध स्थापित किया था। ककुस्थवर्मन इन बड़ी राज्यों के साथ मैत्री पूर्ण सम्बन्ध स्थापित कर रखा था। उसने अपनी एक कन्या का विवाह वाकाटक राजकुमार से कर दिया था। दूसरी कन्या का विवाह गुप्त राजकुमार से कर दिया था। Talagunda लेख के अनुसार गुप्त नरेश ने हीं पहले इस विवाह का प्रस्ताव किया था किन्तु गुप्त राजकुमार का नाम इस लेख में उल्लेख नहीं है।

ककुस्थवर्मा ने बिम्बीसार की तरह वैवाहिक नीति को अपनाया था। जिससे उसके राज्य का विस्तार भी हुआ तथा साथ ही साथ राज्य की सुरक्षा भी हुई।
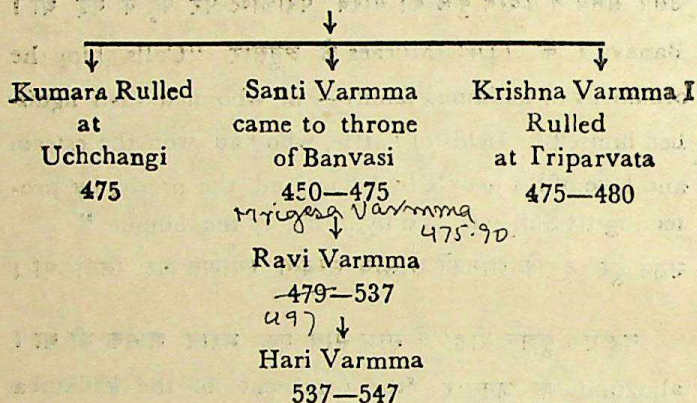
Kakustha Varmma के बाद कदम्ब कुल के शासकों ने तीन भागों में अपना-अपना राज्य स्थापित करके सफलता पूर्वक राज्य कर रहे थे। तीनों पुत्र जो कि अलग-अलग उन तीनों स्थान पर राज्य कर रहे थे। जैसे Santi Varmma बड़ा पुत्र होने के नाते कदम्ब कुल की राजधानी Banavasi पर राज्य कर रहा था। Kumara Varmma Uchchangi स्थान पर राज्य कर रहा था और Kumara Varmma के समकालीन था। उसका दूसरा छोटा भाई Krishna Varmma I Triparvata पर राज्य कर रहा था।

इस समय हम लोग Banavasi के कदम्ब का इतिहास अध्यान कर रहे हैं। इसलिए हम Banavasi के शासकों को एक के बाद एक वर्णन करेंगे।

Santi Varmma

ककुस्थवर्मा के पश्चात उसका पुत्र शान्ति वर्मा Banavasi के सिंहासन पर बैठा। यह भी कदम्ब कुल का एक शक्तिशाली शासक

था। इसने सुदुर दक्षिण पर आक्रमण किया। उस समय वहाँ पल्लव काँची की दूसरी शाखा पर विजय किया और अपने आधीन करके अपने भाई कृष्ण वर्मा को वहाँ का शासक नियुक्त किया।

जनता उनको उसे अच्छे कार्यो के लिये प्यार करती थी। वह बहुत ही ज्ञानी व्यक्ति था। उसने अपने राज्य में सुचारु रुप से शासन व्यवस्था किया था।

उसने मंगल कार्य के लिये अत्यधिक दान दिया। उसके पौत्र के लेखों में इस प्रकार वर्णन है। "Santi varmma rewarded the good conduct of his citizens." उसको सम्पूर्ण Karnnata का शासक कहा गया है। Birur plates of vishnu varmma में इस प्रकार वर्णन है। "Master of entire Karnnata region of the earth" शान्ति वर्मा अपने राज्य काल में पल्लव की एक दूसरी शाखा पर आक्रमण करके तथा सफलता प्राप्त करके दक्षिण भाग के उस स्थान पर अपने भाई कृष्ण वर्मा I को वहाँ का शासक नियुक्त किया। शान्तिवर्मा की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र नियमानुसार वनावसी के राजगद्दी पर बैठा और कृष्ण वर्मा I अपने भाई शान्ति वर्मा के द्वारा जिते हुए दक्षिण भाग पर राज्य कर रहा था।

Mrigesa Varmma

यह महाराजा शान्ति वर्मा का पुत्र था। Mrigesa Varmma के लेख (1) Hire Sakuna plates में उसको इस प्रकार से पुकारते थे "Srimat Kaustha's dear son's son" Devageri लेख में उसको "शान्तिवर्मा का पुत्र" से पुकारे हैं। (2) Halise plates में उसको शान्तिवर्मा का बड़ा पुत्र कहा है। (3) Dr. Moraes के अनुसार "Mrigesa varmma is variously styled in the inscriptions as Sri Vijayasiva Mrigesa Varmma, Mrigesa Varmma, Sri Mirgesa or Simply Mrigesa.

Mrigesa Varmma के पिता शान्ति वर्मा ने अपने राज्य काल में अपने भाई कृष्ण बर्मा I को दक्षिण भाग का शासक नियुक्त कर दिया था। Mrigesa Varmma और उसके चाचा कृष्ण वर्मा I दोनों एक साथ अलग-अलग स्थान पर राज्य करने लगे। उसके चाचा कृष्ण वर्मा I का राज्य दक्षिण भाग के एक शाखा में थी। पल्लवों की दूसरी शाखा ने उसके चाचा कृष्ण वर्मा I के ऊपर आक्रमण किया। इसमें कृष्ण वर्मा I की मृत्यु हो गई। लेकिन Mrigesa Varmma ने गंगों और पल्लवों से सफलता पूर्वक युद्ध किया। लेखों में उसकी वीरता का वर्णन अति सुन्दर भाव से किया गया है। उसकी स्त्री का नाम Prabhavati था। उसका जन्म Ka keya परिवार में हुआ था। The epigraph at Talagunda record, some grant by Mrig-esa Varmma's Queen, says, that "She was born in the noble kaikeya family, her name being Prabha vati, She was he beloved wife of Mrigesa Varmma Dharma-mah-araja, sprung from the renowned Kadamba family and the mother of Ra(vi) Varmma Dharma-maharaja."

वह एक महान शासक था। इसलिए Devagiri कहते हैं he was "the great king of the kadambas" और fleet क अनुसार "the family of kakustha, to which he belonged, be-came in his time the lamp of the world" उसके पुत्र Ravi varmma के दान पत्र में उसे कदम्ब कुल का ज्योति (प्रकाश) कहा गया है। जिस प्रकार प्रकाश अन्धकार को दूर करके चारो तरफ प्रकाशमय कर देता है उसी प्रकार उसका यश तथा बाहुवल से शत्रु रूपी अन्धकार को दूर करके यश रूपी प्रकाश को काफी दूर तक विस्तृत किया था। Halsi plates में वर्णन मिलता है कि उसने पल्लव और गंगों के ऊपर आक्रमण किया और दो राज्यों के राजाओं को पराजित कर दिया। Fleet के अनुसार—"Uprooted the

Family of Tunga Ganga" and "was a very fire of destruction to the Pallavas."

अब प्रश्न उटता है कि उस समय गंगो का राजा कौन था। लेकिन अभी तक यह प्रश्न अधूरा है। दूसरे प्रश्न के अन्तरगत उस समय पल्लव शासक कौन था। इस प्रश्न में कुछ प्रकाश मिलता है। उस समय उसके समकालीन पल्लव शासक Skandavarmma, Viravarman तथा Vishnugopa था। सम्भवतः Mrigesa Varmma ने इन तीनों में से एक को पराजित किया था। वह एक महान शासक था। उसने अपने राज्य काल में शासन व्वस्था को सुसंगठित किया था।

Devagiri ताम्रपत्र के अनुसार वह शासन व्यवस्था की कला में बड़ा दक्ष था। Fleet के अनुसारः—"He was well skilled in the art of Government." वह बहुत अच्छा न्याय करता था। वह न्याय के लिए बहुत ही प्रसिद्ध था। Dr. Moraes के अनुसारः—

"Equal justice to all with out distinction of Birth or title."

उसकी तुलना युधिष्ठिर से किया जाता था। Hitnahebbagibe plates में इस प्रकार वर्णन है: —"Yudhisthira in justice."

वह बड़ा दानी भी था। वह ब्राह्मणों, साधुओं तथा विद्वानों को खूब दान देता था। वह विद्वानों को आदर के साथ सहर्ष दान देता था।

वह बड़ा धार्मिक व्यक्ति भी था। उसने अपने एक लेख में इस प्रकार कहा है:— Honouring gods, Brahmans, priests and the learned; ever making gifts to chief Brahmans." उसके समय में धर्म की खूब उन्नति हुई। वह जैन धर्म का अनुयाई था

लेकिन सब धर्मों का आदर करता था। वह खेल-कूद में भी भाग लेता था। जैसे—घुड़दौर, शिकार, कुश्ती, भाला फेकना इत्यादि। उसे हाथियों तथा घोड़ों की नस्ल पहचानने की अदभुत योग्यता प्राप्त थी। वह केवल एक महान शासक ही नहीं था बल्कि वह हर क्षेत्र में दक्ष था। उसने अनेक निर्माण कार्य भी किया, अपने दिवंगत पिता की पुण्य स्मृति में पालाशिका (हल्सी) में एक जैन मन्दिर का निर्माण कराया था। इस लिए कदम्ब कुल में उसे महान शासक कहा गया है।

Mandhatri Varmma

Mrigesa Varmma की मृत्यु के समय उसका पुत्र Ravi Varmma युव (अल्प) अवस्था में था। फलस्वरूप Mandhatri Varmma राजधानी बनावसी के सिंहासन पर राज्य करने के लिए Uchchangi से आया। Kudgere plates के अनुसार Mandhatri Varmma इस राजधानी के कुछ दूर Uchchangi स्थान पर राज्य कर रहा था (सम्भवतः वह प्रान्तीय शासक था) Mrigesa Varmma की मृत्यु के पश्चात् तथा उसका पुत्र Ravi Varmma युवावस्था (अल्पआयु) होने के कारण Mandhatri Varmma Banavasi पर राज्य करने के लिए आया।

उन्होंने सात वर्ष तक राज्य किया। उसके उत्कर्स के बारे में Shimoga plates में इस प्रकार वर्णन है। "banner in the shape of the fame acquired on many battle fields which his scent-elephants in rut trampled on the bodies of his enemies"

उसके अल्प समय के राज्य में रहने के कारण कोई भी युद्ध का वर्णन नही प्राप्त होता है लेकिन यह अवश्य ज्ञात होता है कि जब Ravi Varmma ने अल्प अवस्था को पार किया और उत्तराधिकारी

बनने के लिये Mandhatri varmma पर आक्रमण किया और यह एक प्रकार का गृह युद्ध छिड़ गया जिसमें Mandhatri varmma की हत्या कर दी गयी।

Ravivarmma

Mandharivarmma की मृत्यु के बाद पुनः वनावसी वंशावली की मुख्य शाखा के नरेश के हाथ आया।

कदम्ब कुल के वशावली की मुख्य शाखा के शासक Ravi–varmma वनावसी के सिंहासन पर बैठा। वह Mrigesa का पुत्र था। जिस समय यह नरेश अल्प अवस्था तथा गृह युद्ध में व्यस्त था। उसी समय गंग और पल्लव ने अपनेको स्वतंत्र घोषित कर दिया। जब कि Ravi –varmma के पिता Mrigesa ने उन दोनों राज्यों के शासकों को पराजित किया था। पुनः Ravivarmma ने उन दोनों राज्यों के शासकों को पराजित कर दिया था।वह एक महान योधा था। उसने अपने भुजा बल के द्वारा सामराज्य को सुदृढ़ किया। Fleet महोदय ने Halsi plates के अधार पर उनकी भुजावल को इस प्रकार वर्णन करते हुए कहते हैं।"

"who Possessed a blameless and mighty regal Power thathad been acquired by the strength of his own arm."

Ravivarmma ने गंगा पर आक्रमण किया था। इस वार भी गंगा के शासक का नाम पता नहीं चलता है लेकिन कुछ संकेत मिलता है। Nilambar Plates के अनुसार गंगा शासक Harivarmma ने अपनी राजधानी kuvalala (kolar) से बदल कर Talakad पर नई राजधानी की नीव डाली थी। सम्भवतः वह Ravivarmma के डर से या उससे पराजित होकर इस नये स्थान पर नये राजधानी की स्थापना किया था। Ravivarmma ने चन्द्र दण्ड प्रथम नामक

पल्लव आक्रमणकारी को बुरी तरह पराजित करके खदेड़ दिया। Sorab Taluqia में प्राप्त एक लेख में उल्लेख है कि Ravivarmma के मृत्यु के पश्चात् उसकी पत्नी सती (sati) हो गई थी।

Harivarmma

Ravivarmma के पश्चात उसका पुत्र Harivarmma राजगद्दी पर बैठा। Harivarmma कदम्ब कुल की मुख्य शाखा का अन्तिम शासक था। वह शान्ति प्रिय तथा धार्मिक व्यक्ति था। उसके समय से चालुक्य नरेश की शक्ति का उदय हो रहा था फलस्वरूप बदामी के चालुक्यों ने कदम्ब पर आक्रमण करने लगे और avivarmm के समय भी यह आक्रमण हुआ लेकिन Harivarmma उन शक्तियों का सामना न कर सका। वह एक महान योधा नहीं था लेकिन शान्ति और कोमल हृदय वाला व्यक्ति था। Fleet Halsi Plates के आधार पर कहते हैं कि "a moon to blue lotuses, that were the hearts of all his subjects"

—:o:—

पल्लव

Sources:—किसी भी देश तथा राजवंश का इतिहास जानने के लिए कुछ मुख्य साधन होते हैं। जिनमें पहला साधन है साहित्यकारों की कृतियाँ और दूसरा है विभिन्न कलाकारों की कृतियां। इसी प्रकार पल्लव राजवंश का इतिहास जानने के लिये हम इन आधारों का साहारा ले सकते हैं।

१. Epigraphy:—Pallavas के इतिहास का ज्ञान प्राप्त करने में Epigraphy Sources बहुत ही मुख्य स्थान रखते हैं। Dr. Fleet के अनुसार "We are ultimately dependent on the inscriptions in every line of in Indian research." बिना शिला लेखों के Pallavas के राज्य, राजा का नाम और उनका समय ज्ञान प्राप्त करना बहुत ही कठिन समस्या है।

Pallava शिला लेखों को हम तीन भागों में बाँट सकते हैं। पहले वह जो कि Parakrit में लिखे हुये हैं। उनका समय २५०—३५० ई० का है। दूसरे वे जो Sanskrit में लिखे हुए हैं। उनका समय ३५०-६०० ई० है और तीसरे Lithic जो कि Sanskrit और Tamil में है और जिनका समय 7th Century है और जिनमें Pallavas का प्राचीन "Grantha Tamil" का Records है।

इन शिलालेखों में Pallavas के राजाओं के दान का ज्ञान प्राप्त होता है। इनमें भूमि दान और साथ-साथ कुछ आर्थिक दानों का उल्लेख मिलता है। यह दान Brahmans को दिये जाते थे और मंदिर आदि निर्माण करने में इनका उपयोग होता था। इन शिला लेखों में दान देने वालों का नाम

प्राप्त होता है और यह लिखा मिलता है कि यह दान किस कार्य के निमित्त दिया गया है। साथ-साथ यह भी मालू पड़ता है कि यह दान किस यज्ञ या धर्म के हेतु दिया गया था ।

दान के अतिरिक्त कुछ महान कार्यों का भी उल्लेख इन शिलालेखों में प्राप्त होता है 5 th Century के Sanskrit शिलालेखों में दान के लिए कुछ राजाओं का नाम उल्लेख हुआ है साथ ही साथ Kuram, Kasakkudi, Velurpalayam and Bahur Plates में भी राजाओं के नाम भी उल्लेख हुए है। इनमें उनके महान् कार्यों तथा संपत्ति का उल्लेख है ।

Fleet:—"Thus, not with the expressed object preserving history, but in order to intensify the importance of everything connected with religion (social, political, economical, art) and to secure grantees in the possession of properties conveyed to them, there was gradually accumulated almost the whole mass of epigraphic records from which chiefly the ancient history of India is now being put together."

२. Stone Inscription:—ये 7th century से आरम्भ होते हैं। इनसे Pallavas का नवीन इतिहास ज्ञान प्राप्त करने में अधिक सहायता मिलती है। Vayalur Pillar inscription of Rajasimha और Panamalai inscription of Rajasimha में वंशावली का ज्ञान प्राप्त होता है तथा धर्म के हेतु दान, तथा समकालीन राजाओं का ज्ञान प्राप्त होता है। यह प्राय: सब साहित्यों में है। लेकिन इन में कुछ उल्लेख पद्य रूप में भी है, जैसे inscription at the Pallava rock-cut temple at Dalavanur of King Mahendra Varman प्रथम इन Stone

inscriptions तथा Copper plates में कुछ महत्वपूर्ण घटनायें तथा पल्लव राजाओं की कला निर्णय का परिचय मिलता है। इन लेखों में Dates नहीं मिलतीं, यह एक बड़ी असुविधा है लेकिन समकालीन राजाओं का नाम ज्ञान इन से प्राप्त हो जाता है जो उस समय के Pallava राजवंश के सम्पर्क में थे।

३. Monuments:--Pallava राजवंश का इतिहास प्राप्त करने में Monuments अधिक लाभदायक सिद्ध हुए हैं। इनमें समय, राजा का नाम और उनके महत्वपूर्ण कार्यो की रूपरेखा प्राप्त होती है और साथ ही साथ उस समय के साहित्य तथा वस्तु कला का ज्ञान भी प्राप्त होता है। Monuments एक ऐसा साधन है जिन के आधार पर हम उस समय की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, कला और राजनैतिक व्यवस्था का अनुमान लगा सकते है। पल्लवों के प्राचीन स्मारकों का महत्व यद्यपि राजनैतिक इतिहास जानने के लिये उतना लाभदायक नहीं है, क्योंकि इनमें राजनैतिक घटनाओं का उल्लेख करना कठिन था, किन्तु कभी-कभी राजाओं का नाम, उनका वंश और उनका अनुमानिक काल निश्चित करने में वे अधिक सहायक सिद्ध होते हैं। विभिन्न प्रकार के भवन, राजप्रसाद, विहार, मठ और समाधि आदि असंख्य वस्तुयें अपने मूल रूप में या भग्नावशेष रूप में पल्लवों के पिछले इतिहास को प्रकाशित करती है।

पल्लवों के कुछ Monuments निम्न स्थानों में खोज निकाले गये हैं: Mahendravadi, Pallavaram, Trichinopoly, Singavaram. Vallam, Mamandur Kilmavilangai, Singavaram Sittannavasasal.

इनमें से कुछ Rock-cut cave हैं जो कि Pallava शिलालेखों में उल्लिखित हैं और कुछ मंदिर के रूप में हैं, जैसे Kailasanatha temple at Kanchipuram और shore temple at seven pagodas.

Cave temple:--में Siva या Vishnu की आराधना की जाती

थी। Adivaraha temple at saven pagodas में है। उसमें राजा Simhavishnu और Mahendra Varman I की मूर्ति है। यह उभड़ी हुई मूर्ति है (Bas-relief.) इन मंदिरों से हमें तात्कालिक धार्मिक अवस्था का ज्ञान भी प्राप्त होता है।

४. साहित्य Literature :—इसके अंतर्गत Pallavas की परंपरा और उनके वंशजों की पूर्ण रूप रेखा प्राप्त होती है। प्राचीन तामिल भूमि का इतिहास निर्भर करता है Tamil works पर जिससे हम लोग संगम युग से परिचित हैं और जो Ist century AD से 2nd century AD तक माना जाता है।

संगम युग में कुछ चोल राजाओं और जातियों के सरदार या चौधरी का नाम उल्लेख किया गया है, लेकिन Pallava का उल्लेख नहीं किया गया है। इससे अनुमान लगता है कि Pallavas का शासन "संगम युग" के बाद में हुआ। इस कारण हम लोगों के सामने एक कठिन समस्या यह आती है कि पल्लवों ने किस समय शासन किया। हम जानते हैं कि कांची पर Tondaman Ilam Tiraiyan नामक राजा राज्य कर रहे थे। संगम युग में Tondaiyar नामक लोगों का उल्लेख हुआ है जो कि पल्लवों के बहुत ही निकट संबंधी थे। लेकिन उसका कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं प्राप्त होता है। संभवतः पल्लव एक Tribal नाम है Aruvalar और Vadavar की तरह।

एक सगम युग जो कि Perumbanarrupaddi के नाम से पुकारा जाता है। इसको Rudran Kannanar ने लिखा है। जिसने Chola King Karikal का वर्णन किया तथा कांची की रूप रेखा प्रस्तुत की उसने कांची का प्राचीन शासक Tondaman Ilam Tiraiyan को बताया जो कि पल्लवों का पहला शासक था। अन्य विद्वानों का भी यही मत है।

दूसरा साहित्यिक ग्रन्थ मत्तविलास प्रहसन (Matta Vilasa

Prahasana) जो कि Mahendra Varman I के द्वारा रचा गया था। इस प्रहसन की प्रधान रोचकता यह है कि वह तत्कालीन सामाजिक तथा धार्मिक जीवन का उल्लेख करता है।

एक अन्य साहित्यिक ग्रन्थ है जो पल्लवों के काल का उल्लेख करता है। यह तामिल में है। उसका नाम है Nandi KKalambakam. इसमें Nandi Varman तृतीय की वीरता का वर्णन Digambara Jaina Work जो कि Lokavibhaga से पुकारा जाता है। इस में पल्लवों के वंश, राज और एक प्राचीन पल्लव राजा Simhavarman का उल्लेख प्राप्त होता है।

पल्लव की उत्पत्ति

पल्लव वंश की उत्पत्ति का प्रश्न आज भी विवाद ग्रस्त बना हुआ है। दीर्घकाल की गवेषणा के पश्चात् पल्लवो की उत्पत्ति के विषय में प्रमुख मत प्रचलित है।

1. Dr. Vincent Smith ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ Early History of India के प्रथम संस्करण में अपनी यह सम्मत्ति प्रकट किया था कि पल्लव लोग पर्सियन अथवा पार्थियन (Persian or Parthian) मूल के थे। स्मिथ साहब के इस मत का समर्थन श्री वेनकय्या (Venkayya) ने कुछ विस्तार के साथ किया है। श्री वेनकय्या ने लिखा है "जब तक पल्लवो के मूल (उत्पत्ति) का प्रश्न विवादशून्य तर्कों द्वारा सन्तोष जनक रूप में सुस्थिर नहीं हो जाता, तब तक उनका समीकरण पुराणों में उल्लिखित पह्लवों, पलहवों और पहलवो के साथ किया जाना चाहिए। यह समीकरण शब्द व्युत्पत्ति के ऊपर आधारित है और इसकी पुष्टि इस बात से हो जाती है कि द्वितीय शताब्दी के प्रारम्भ में पश्चिमी भारत कीं जनसंख्या में पलहव (पह्लव) लोग एक विशिष्ट तत्व

के रूप में विद्यमान थे। पश्चिमी भारत से पूर्वीय समुद्रतट की ओर उनका संक्रमण केवल सम्भव ही नहीं प्रतीत होता अपितु ज्ञात ऐतिहासिक तथ्यों के द्वारा यह (संक्रमण) सम्भाव्य भी कर दिया गया है" श्री वेनकय्या ने "पह्लव संक्रमण" के आधार पर अपने मत को पुष्ट करने का प्रयत्न किया है। किन्तु उनके मत का वास्तविक आधार नामों का ऊपरी साम्य ही है क्योंकि इस बात का कोई सुनिश्चित प्रमाण नहीं मिलता कि पह्लव (या पार्थियन) लोग कभी भी दक्षिणपथ (दक्कन) अथवा पश्चिमी भारत से सुदूर दक्षिण में जाकर बस गये थे।

2. Rice—राइस महोदय के मतानुसार पल्लवों की उत्पत्ति पहलवों से हुई थी।

a. दोनों नामो में समता है। b. कांची के एक मन्दिर में पल्लव नरेश नन्दि वर्मन द्वितीय के सिंहासमारोहण की मूर्ति है। इसमें उनको डोमिट्रियस की भांति अपने सिर पर गजशीर्ष धारण किए हुए दिखाया गया है। c. दुब्रीया महोदय के अनुसार रूद्रदमन के पहलव मंत्री सुविशाख ने कांची के पल्लव वंश की स्थापना की थी।

परन्तु इन तर्कों में कोई बल नहीं है। पल्लव वंश के लेखो में कहीं पर भी पहलव जाति का नाम नहीं आया है। पल्लव यदि पहलव वंशीय होते तो वह कभी अश्वमेघ न करते।

अपने Mysore and coorg from Inscriptions में Dr: Rice (राइस) ने लिखा है कि दक्षिण भारत के पल्लव नरेश का समीकरण पहल्वो के साथ किया जाना चाहिए, जिन पह्लवो का उत्पादन गौतमी पुत्र शतकर्णि ने शको और यवनों के साथ कर दिया था। Dr: राइस की धारणा है कि पह्लव शब्द "पार्थव" शब्द का प्राकृत रूप है, जिसका अभिप्राय पार्थियन, विशेषतयः एरसिडियन (Arsacidian) पार्थियनो से है। किन्तु जैसा कि हम देख चुके हैं कि चालुकयो के मूल के सम्बन्ध में Dr. Rice की विचित्र धारणा निराधार है, उसी प्रकार इस बात का

भी अभी ही विचार किया जा चुका है कि दक्कन के पहलवो और दक्षिण भारत के पल्लवो में कोई सम्बन्ध नहीं था। Dr. Smith ने अपने ग्रन्थ (Early History of India) के तीसरे संस्करण में पल्लवो के विदेशी मूल की इस धारणा का खण्डन किया है और लिखा है कि पल्लव लोग देश के किसी स्वदेशोत्पन्न कबीले, वंश या जाति के थे।

3. Mr:—Rasanayagam रसनयगम का मत है कि पल्लव चोड़ नाग कुल के थे और सुदूर दक्षिण तथा सिंहल के निवासी थे। कहा जाता है कि एक चोल राजा किल्लिवल्वन ने मनीपल्लवम Manipallavam (सिहल तट के समीप एक द्वीप) के नाग राजा वलैवणन Valaivanan की कन्या पिलिवल्य Pilivalai के साथ विवाह किया था। इन दोनों के एक पुत्र उत्पन्न हुआ था जिसका नाम Tondaman-I lam-Tiraiyan रखा गया था। यह पुत्र Tondaimandalam का राजा हुआ और उसकी राजधानी कांची थी। नाग कन्या के प्रदेश मनिपल्लवम से ही इस राजकुमार के वंश का नाम "पल्लव" पड़ा। इस प्रकार पल्लव वंश चोलो और नागो के सम्मिश्रण से उत्पन्न हुआ था।

4. Dr. Jaswal जायसवाल का मत है कि पल्लव वंश वाकाटक वंश की एक शाखा थी। यदि यह मत सत्य है तो पल्लव ब्राह्मण सिद्ध होते हैं। परन्तु तालगुन्ड अभिलेख में पल्लवो को क्षत्रिय कहा गया हैं। "पल्लव न तो विदेशी थे न द्रविड़ वरन उत्तर के शुद्ध अभिजात कुलीय ब्राह्मण थे जिन्होंने सैनिक वृत्ति अपना ली थी।"

5. Mr: Krishna Swami Aiyangar आयंगर के मतानुसार पलल्व तामिल भाषा के शब्द टोण्डेंयर Tondair शब्द का रूपान्तार है। इसलिए इनकी उत्पत्ति टोण्डमंडल्म Tandaimandalam में प्रतीत होती है। Tondainmandalam में सातवाहनो का अधिकार था। यहां पल्लब सातवाहनो के अधीन सामन्तो के रूप में राज्य करते थे। सातवाहनों के पतन के पश्चात् २२५ ई० के लगभग पल्लवो ने यहाँ अपनी

स्वतन्त्रता घोषित कर दी। सम्भवत पल्लवो ने अपनी राज्य स्थापना में अपने आस-पास की अन्यान्य जातियों मरव, कल्ल, कुरूम्ब आदि से भी सहायता ली थी।

Prof: N K. Sastri:-- की यह धारणा है कि अपने समकालीन छूत और कदम्ब राज-वंशो की भाँति पल्लव शासक भी मूलतः उत्तर भारत के ही थे जिन्होंने अपने लिए दक्षिण में एक नया निवास-स्थान खोज लिया और वहाँ की स्थानीय परम्पराओ को अपने प्रयोग में लाने के लिए ग्रहण कर लिया। लेकिन पल्लवो को कदम्बो तथा वाकाटको की तरह ब्राह्मण मानना असंगत जँचता है।

7. श्री एच० कृष्ण शास्त्री: का कहना है कि पल्लव उस जाति से उत्पन्न हुये थे जो ब्राह्मणो तथा द्राविड़ों के सम्मिश्रण से उत्पन्न हुई थी। शास्त्री जी की इस धारणा का आधार एक अनुश्रु ति है जिसके अनुसार इस वंश का संस्थापक अश्वथायन नामक एक ब्राह्मण था जिसने एक नाग कन्या से विवाह कर लिया था। इनके स्कन्दशिष्य नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। इस प्रकार पल्लव ब्राह्मण-नाग जाति का पतित होता है।

8. डा० राम शंकर त्रिपाठी:--की धारणा है कि इस में सन्देह नहीं कि पल्लवो के उत्तारी सम्बन्ध की बात कुछ सीमा तक सही है क्योंकि उनके प्राचीन अभिलेख प्राकृत में है और वे संस्कृत विद्या और संस्कृति के भी संरक्षक थे। परन्तु "द्रोणाचार्य और अश्वत्थामा" से उनको सम्बन्द करने वाली अनुश्रुतियाँ सत्य पर अवलम्बित नहीं है। तालगुण्ड अभिलेख में कदम्ब मयूरशर्मन काञ्ची के ऊपर "पल्लव क्षत्रियों के प्रभाव को धिक्कारता है जिससे स्पष्ट है कि पल्लव क्षत्रिय थे।

9. राजशेखर प्रसिद्ध कवि (जो गुर्जर-प्रतिहार नरेश, महेन्द्रपाल या महीपाल की राजसभाओं में नवी शताब्दी के अन्त तथा दसवी शताब्दी के प्रारम्भ में रहता था) ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ "भुवनकोष" में भारत को पाँच भागों में विभक्त किया है और प्रत्येक भाग के लोग, नगरो और नदियों

का वर्णन किया है। राज शेखर ने पल्लवों को दक्षिणी भाग अथवा दक्षिणापथ (माहिष्मती के उधर) का बताया है और पह्लवो को "पृथूदक" के उस पार उरात्तपथ का निवासी बताया है। इस प्रकार राजशेखर के अनुसार, पल्लव और पह्लव दो विभिन्न जातियों के लोग थे। पल्लव दक्षिण में रहते थे और पह्लव सिन्धु नदी के दूसरी ओर सीमा प्रदेश में रहते थे।

यह एक दिलचस्प (मनोरंजक) बात है कि तामिल भाषा में पल्लव का अर्थ लुटेरा है।

Rise of Pallava Power:--जब तीसरी शताब्दी ई० में सातवाहनों की शक्ति छिन्न भिन्न हो गयी। उसी समय पल्लवो की शक्ति का विकास आरम्भ हुआ। कुछ विद्वानों के विचार में पल्लव आरम्भ में सात वाहनों के सामन्त थे और उन्हीं की आधीनता में शासन करते थे। सात-वाहन साम्राज्य के पतन के समय जब अन्य सामन्तों ने अपने को स्वतंत्र करना आरम्भ किया उसी समय पल्लवों ने भी अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया और अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया। ईसा की तीसरी शताब्दी के प्राकृत Prakrit में लिखे हुये तीन ताम्र पत्रों Copper plates से पता चलता है कि इस वंश का पहला राजा बप्पादेव Bappa deva था जिसने जंगलों को काट कर तथा सिचाई की सुबिधा कर इस प्रदेश को रहने योग्य बना दिया था। बप्पादेव ने तेलगू आन्ध्रपथ तथा तामिल तोराडमराड पर अपनी सत्ता स्थापित कर ली। तेलगू आन्ध्रपथ का प्रधान धान्यकट Dharanikota अर्थात धरर्णी कोट्ट Dhanya kataka था और तामिल तौराडमराडलम की राजधानी कांची अर्थात कांजीवरम थी।

अनुमान लगाया जाता है कि उस समय Pallava kingdom दो भागों में बँट गया था। पहला उत्तरी भाग Telugu Distrcits उसकी राजधानी Amaravali थी और दूसरा Tamil Districts, उसकी

राजधानी Kanchipuram थी । उस समय Palar के आधीन दक्षिण था और Krishna on the north और Krishna के उत्तार में Pallavas का राज्य था ।

Karle inscription of Gautamiputra Satakarne और Nasik Inscription of Vasishtiputra Pulumavi के अनुसार Bappa और Sivaskanda varman का समय करीब तीसरी शताब्दी के प्रथम में निर्धारित करते है । ।

कहा जाता है कि Bappa बहुत ही दानी थे । उसने बहुत से Gold coins दान दिया और हजारों बैल भूमि जोतने के लिये दिया । जिससे अनाज की काफी उपज हो और Pallava परिवार का पालनपोषण अच्छी तरह हो सके । उस समय कृषि कार्य काफी होता था । जिससे Pallava राज्य धन धान्य से पूर्ण था । इसका काल २५०–२७४ माना जाता है ।

SIVASKANDA VARMAN

Prakrit राजपत्र के आधार पर Sivaskanda varman अपने पिता के १०वीं वर्ष में युवराज के रूप में था । उसने धर्म-महाराज की उपाधि धारण की थी ।

प्रारम्भिक पल्लव राजाओं में सबसे अधिक प्रसिद्ध नाम शिवस्कन्दवर्मन का है । इसके तीन ताम्रपत्र मिले हैं । पहले ताम्रपत्र (Mayidavolu) में इसे युवमहाराज कहा गया है । शेष उस समय के है जब वह स्वयं राजा था । इससे प्रकट होता है कि वह भारतद्वाज (Bharadvaja Gotra) गोत्र का था । उसका राज्य उत्तार में कृष्णा नदी तक और पश्चिम में अरब सागर तक विस्तृत था । इस राज्य की राजधानी कांची थी । Hirahadagalli plates of sivaskandavarman

जो कि Bellary District Hirahadagalli नामक स्थान पर पाया गया। उसमें से यह ज्ञान प्राप्त होता है कि शिवस्कन्दवर्मन ने अश्वमेघ Asvamedha, अग्निष्टोम Agnishtoma और वाजपेय Vajapeya यज्ञ किये थे। इ से यह प्रकट होता है कि वह पर्याप्त रूप से शक्तिशाली था और अनेकों राजाओं और राज्यों पर उसका अधिपत्य था। शिवस्कन्द वर्मन के राज्य का विभाजन Asokan राज्य की तरह था। जिस प्रकार Asoka ने अपने अपने राज्य का विभाजन किया था उसी प्रकार उसने अपने राज्य को कई भागों में विभक्त किया था जो कि इस नाम से उल्लिखित हैं। Vishaya, Rattha and Grama और जो of ficers उन स्थानों पर शासन करते थे उनको इस प्रकार से पुकारते थे। (१) Vishaya के प्रधान को Vishayikas (२) Rattha के प्रधान को Ratthika (३) Grama के प्रधान को Desadikata. इन officers को प्राय राज्य के Royal परिवारों के व्यक्तियों को ही नियुक्त किया जाता था। जो कि सुचार रूप से शासन व्यवस्था करता था।

वह व्यक्ति जो कि राजा के द्वारा सम्मति लेता था शासन व्यवस्था में, वह Prime-minister और Private secretary होता था। उसको (Amatya, और Rahasyatikata) कहते थे। जो भी राज्यों के नाम उल्लेख हैं वे सब Prakrit में हैं और अनुमान लगाया जाता है कि Pallava राजा ने अपना शासन व्यवस्था Asokan Dharm-asastras और Arthasastras की तरह सुव्यवस्थित किया था।

राजा के द्वारा जो कर वसूल किया जाता था वह Sanskrit Dharmasastra के आधार पर होता था। उस समय १८ प्रकार के Taxes होते थे। जिससे (Attarasajati-Parihara) कहते थे। उस समय विदेशी व्यापार होता था और classical Writers ने कुछ

वन्दरगाहो का नाम उल्लेख है। Kamara, Poduka Sopatma, Melanga and Kodura etc. उस समय समुद्र व्यापार अच्छी अवस्था में था। शिवस्कन्द वर्मन ब्राह्मणधर्मालम्बी था।

Buddha और Buddhy के बारे में मतभेदः—

British Museum plates of charudevi से Vijay-askanda varman के वंश वाली का नाम ज्ञान प्राप्त होता है। Charudevi, Vijayaskanda Varman की स्त्री थी। Vijay-Skanda Varman का पुत्र Yuvamaharaja Vija Buddha-Varman और उसका लड़का Buddhyankura था।
प्राकृत Prakrit ताम्र पत्र के आधार पर यह वंशावली मानी गयीः—

Early Genealogy:—

Bappa Deva बप्पदेव
| पुत्र
Sivaskanda-Varman शिवस्कन्दवमर्न
|
Baddhy (ankura) बुद्धि (आँकुर)
|
Viravarman वीरवमर्न
|
Vishnugopa विष्णुगोप

हीरहरडगल्ली (Hirahadagalli) विलारी जिला के ग्राम दान लेख से प्रमाणित है कि दक्षिण दक्कन और विशेष कर साताहनी—रट्ट शिवस्कन्द वर्मन का स्वत्व मानता था। सम्भवतः. उसे विजयस्कन्धवमर्न भी कहते थे। कुछ विद्वानो ने इस पर भी सन्देह किया।

इससे अनुमान लगता है कि विजयस्कन्धवर्मन की वंशावली जो कि British Museum plates पर अंकित है वह प्रायः Prakrit' Plate के समान है। लेकिन Birtish Museum plate में Buddhy (ankura के पहले Buddha Varnn का उल्लेख है जो कि Prakrit plate में नहीं है। Prakrit plate में Buddhy (ankura) के बादवीर वर्मन का उल्लेख है किन्तु British Museum plate में वीर वमर्न का उल्लेख नहीं। मालूम होता है कि British Museum plate में बुद्धि के बाद वंश का उल्लेख करना आवश्यक नहीं समझा और Buddhy (ankura) के पहले Buddha Varaman का नाम आया। लेकिन Prakrit plate में शायद Baddha Varman का नाम उल्लेख इसलिये नहीं किया क्योंकि उसने राज्य नहीं किया या कमजोर राजा था। कुछ भी हो दुर्भाग्य वस हमे Buddhyankura के काल तक का इतिहास का ज्ञान प्राप्त नहीं होता है। सम्भवतः शिवस्कन्द वमर्न के पश्चात पल्लव बंश का इतिहास पुनः अज्ञात हो।

विष्णुगोप :—इस अन्धयुग के पश्चात सर्व प्रथम समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति (Allahabad pillar Inscription) में पल्लवो का उल्लेख है। इसके अनुसार जब समुद्रगुप्त ने दक्षिण पर आक्रमण किया था तो उस समय कांची पल्लव वंश का राजा विष्णुगोप राज्य कर रहा था। सम्भवतः प्रायग प्रशस्ति में उल्लिखित पाल्लक (कृष्ण जिले में कोई स्थान) का राजा उग्रसेन विष्णुगोप का सामन्त था। कुछ विद्वानों के मतानुसार विष्णुगोप ने अपने पड़ोसी राजाओं का संघ बना कर समुद्रगुप्त का सामना किया था परन्तु अन्त में वह पराजित हुआ था।

प्रागय स्तम्भ लेख के अनुसार वह कांची का राजा था और उसे समुद्रगुप्त का समकालींन ठहराता है।

GREAT PALLAVAS

Velurpalayam plates के 10 verse में simhavarman को simhavishnu के पिता कहा । Kasakkudi plates of Nandi Vraman में simhavishnu को Avanisimha कहा । उसका पुत्र Mahendravarman I, उसका पुत्र Narasimha Varaman (I), उसका पुत्र Mahendra Varman (II), उसका पुत्र Paramesvara Varman (1), उसका पुत्र Narasimha Varman (II), उसका पुत्र Paramesvara Varaman (II) इसी plates के दूसरी line में Bhima Varman को Simhavishu का वंश धर माना गया और Simhavishu का छोटा भाई कहा गया है । Bhima Varman से लेकर Nandi Varman II के बीच में Buddha Varman, Aditya Varman, Govinda Varman and Hiranya Varman का उल्लेख हैं । Nandi Varman II का पिता Hiranya था लेकिन Bhima Varman से लेकर Hiranya तक के राजो का का क्या सम्पर्क था इस के बारे में ज्ञान प्राप्त नहीं है । सम्भवत: ये सब किसी के आधीन में राज्य कर रहे थे ।

Kasakkdi plates of NandiVarman II, Kuram plates of paramesvara Varman I and Velurpalayam plates के अनुसार Pallava वंश इस प्रकार है ।
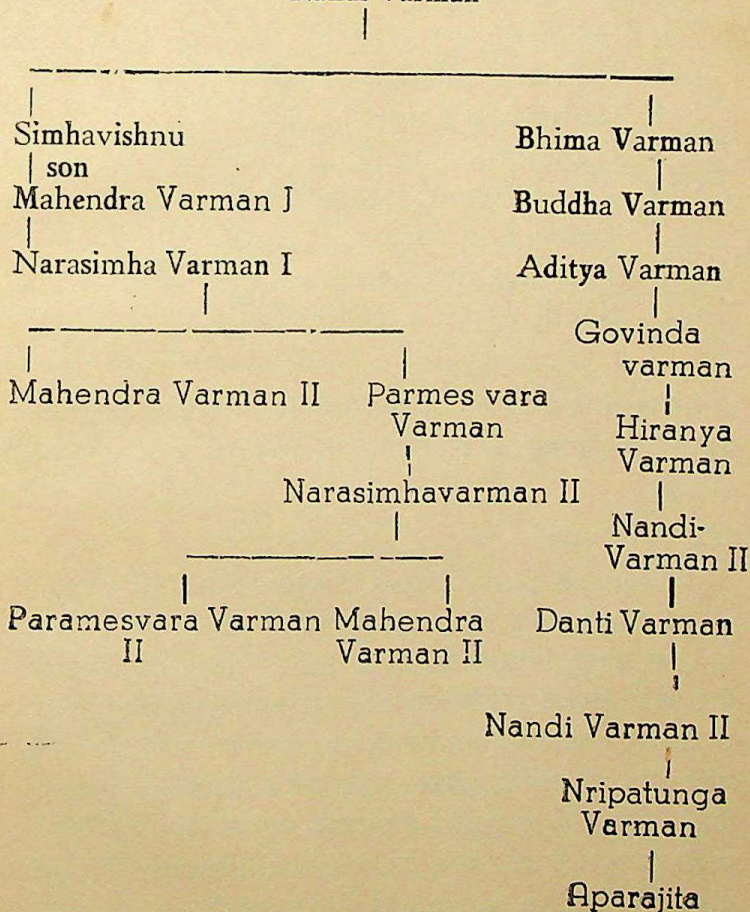
लेकिन Pallava राज्य में निम्नलिखित राजाओं एक के बाद एक ने शासन किया।

1 Simha-Varman (550-575)
2 Simhavishnu (575-600)
3 Mahendra Varman I (600-630)
4 Narasimha Varman I (630-668)
5 Mahendra Varman II (668-670)
6 Paramesvara Varaman I (670-695)
7 Narasimha Varman II (695-722)
8 Paramesvara Varman II (722-730)
9 Nandi Varman II (730-796)

दानपत्रों से पल्लव वंश का राजा सिहवर्मन का नाम प्राप्त होता है। यह बौद्ध धर्मावलम्बी था। इसके अन्य इतिहास का ज्ञान प्राप्त नहीं होता है।

Simhavishnu:—

Velurpalayam Plates के अनुसार Simha Varman का पुत्र Simhavishnu था। वह एक अत्यन्त शक्तिशाली नरेश था। वह पल्लव सिंहासन पर 575 A. D. में बैठा। सिंह विष्णु एक वीर योद्धा तथा महान विजेता था। उसने चोल राजा को परास्त कर अपनी राज्य सीमा कावेरी तक कर ली थी। इसने दक्षिण की शक्तिशाली जाति कमभ्र को पराजित किया। इसने पाण्ड्य Panday नरेश तथा सिंहल नरेश से भी युद्ध किया और उनको पराजित किया। अपने शूर-कार्यों के उपयुक्त ही इसने अवन सिंह (Avanisimha) की उपाधि धारण की Simha varma को Lion of the earth) कहा गया है।

"मत्तविलास प्रहसन" के रचयिता महेन्द्र वर्मन ने अपने पिता सिंह विष्णु की प्रशंसा में ये शब्द कहे हैं।

"पल्लव कुलधरणिमण्डल कुलपर्वतस्य
सर्वनयविजितसमस्तसामन्तमण्डलस्य
आखण्डलसमपराक्रम श्रियः
श्रीमहिमानुरूपदानविभूति परिभूत राजराजस्य"

वह एक महान् विजयता के बावजूद भी स्वयं विद्या प्रेमी था। इसके राज्य में विद्वानों का प्रमुख स्थान था। इसके सभा में संस्कृत का प्रसिद्ध विद्वान Bharavi भारवी रहता था। जिसने संस्कृत के अमर ग्रन्थ किरातार्जुनीय (Kiratarjuniya) की रचना की। उसके समय में शैव तथा वैष्णव धर्म की खूब उन्नति हुयी। वह धर्म में अभिरुचि रखता था। सभी धर्मों को अच्छी दृष्टि से देखता था। वह स्वयं वैष्णव था जैसे कि उसके नाम से प्रकट होता है। वह विष्णु का परम भक्त था। इसकी एक मूर्ति Mahabalipuram की एक गुहा में उत्कीर्ण मिली है। सिंहविष्णु का शासन काल 575-600 तक माना जाता है। सिंह विष्णु के पश्चात उसका पुत्र महेन्द्रवर्मन सिंहासन पर बैठा।

महेन्द्र वर्मन I

जो कि Mahendravikarma से परिचित था। उसके पराक्रम के कारण उसे Vikarma कहा गया। उसने मत्तविलास, Mattavilasa गुणभार Gunabhara विचित्र-चित्त आदि अनेक उपाधियाँ धारण की।

''मत्तविलास प्रहसन" में इस प्रकार उल्लेख है।

श्रीसिंहविष्णुवर्मणः पुत्रः शत्रु षडवर्ग विग्रहपरः परहितपरतन्त्रया महाभूतसधर्मा महाराजोः श्रीमहेन्द्रविक्रमवर्मानाम"

इन उपाधियों से प्रतीत होता है कि सिंहविष्णु के पश्चात उसका महान पुत्र महेन्द्रवर्मन I 600 A. D. में पल्लव वंश का नृपति हुआ।

महेन्द्रवर्मन का शासनकाल कई बातों के लिए स्मरणीय है।

1 प्रथम बात यह है कि दक्षिण में वही ऐसा प्रथम शासक था जिसने कठोर पाषाण खण्डों को काटकर मन्दिर खुदवाने की कला का वहाँ प्रचार किया।

2 दूसरी बात यह है कि उसी के शासन काल में अप्पर Appar नामक सन्त ने अपने धर्म प्रचार का कार्य किया और संस्कृत के महाकवि भारवी Bharavi ने अपना प्रसिद्ध महाकव्य "किराता-र्जुनीय" लिखा था।

3 शासन प्रबन्ध के दृष्टिकोण से उसके राज्य काल में जनता को पूर्ण रूप से उपयोगी और निरूपद्राविता (बिना उपद्रव का वातावरण प्रदान किया) जिससे वह उद्योग व्यवसाय के शान्ति पूर्ण कार्यों में प्रवृत्त हो सकी।

यह उल्लेख करना आवश्यक है कि महेन्द्रवर्मन प्रथम के पहले तक जनता को अपने शासकों के युद्धों का बोझ उठाना पड़ता था। लेकिन सैनिक दृष्टिकोण से भी महेन्द्रवर्मन का शासन काल महत्वपूर्ण था क्योंकि इसी समय से पल्लव-चालुक्य और पल्लव पाण्डय संघर्षों का प्रारम्भ हुआ। महेन्द्रवर्मन ने इन कार्यों के अलावा नाटक, संगीत चित्र-कला आदि विभिन्न ललित कलाओं की उन्नति को खूब प्रोत्साहन प्रदान किया।

वह अपने पिता की भाँति वीर और योग्य नरेश सिद्ध हुआ। "A many sided genius, great alike in war and in Peace" N K. Sastri

महेन्द्रवर्मन के समकालीन नरेश पुलकेशिन द्वितीय (चालुक्य वंश जो पश्चिम में राज्य कर रहे थे) उसी की भाँति कलानुरागी तथा संस्कृति सम्पोषक थे। चालुक्य सम्राट पुलकेशिन द्वितीय की धाक सम्पूर्ण दक्षिण-पथ पर जमी हुई थी।

पल्लव और चालुक्य संघर्ष :—

पल्लव नरेश महेन्द्रवर्मन और चालुक्य नरेश पुलकेशिन द्वितीय एक ही समय में अपनी-अपनी शक्ति को बढ़ा रहे थे। पल्लवों की बढ़ती हुई शक्ति का दमन करने के लिए पुलकेशिन द्वितीय ने महेन्द्रवर्मन पर आक्रमण किया। जिससे महेन्द्रवर्मन को पुलकेशिन द्वितीय से युद्ध करना पड़ा। पल्लवों और चालूक्यों में दारुण और दीर्घकालीन संघर्ष छिड़ गया। ऐहोल (Aihole) अभिलेख के पुलकेशिन का वक्तव्य है कि उसने "उसकी शक्ति के उत्कर्ष के विरोधी पल्लवनाथ" को परास्त कर दिया और "अपनी सेनाओं द्वारा उठायी धूल से ढकी काञ्चीपुर के प्राचीरों के पीछे अपना विक्रम छिपाने को" वाध्य किया। पुलकेशिन द्वितीय ने अपने शत्रु से वेंगी Vangi का प्रान्त छीन लिया और वहाँ का शासक अपने अनुज विष्णुवर्मन को बनाया।

पुलकेशिन द्वितीय ने पल्लव राज्य के उत्तर प्रदेशों पर अधिकार करके कांची पर आक्रमण किया। महेन्द्रवर्मन ने भयंकर युद्ध के पश्चात अपनी राजधानी की रक्षा की और उसे परास्त कर खदेड़ दिया परन्तु फिर भी उसके उत्तरी प्रदेश उसके हाथ से जाते रहे।

धर्म :—

महेन्द्रवर्मन पहले जैन मतावलम्बी था और अन्य सम्प्रदायों के प्रति असहिष्णु था परन्तु अपने शासनकाल के मध्य के लगभग अथवा कुछ और पहले संत अप्पर Appar के प्रभाव से जैन मत को छोड़कर वह कट्टर शैव हो गया। इसके फल स्वरूप जैनों का ह्रास होने लगा और शैव सम्प्रदाय पुनरूज्जीवित हो उठा। सन्त अप्पर के सक्रिय प्रचार से शैव सम्प्रदाय उस भूभाग में खूब फैला, कहा जाता है कि उसने (महेन्द्र-वर्मन) ने महेन्द्रवाड़ी Mahendravadi उत्तर अर्काट (Arcot) जिला में अपने नाम का एक विष्णु दरी-मन्दिर बनवाया जो कि Mahendra Vishnugrha से पुकारा जाता था। मन्डगप्पतु

अभिलेख (Mandagattu Inscription of Mahendravar-man I) से विदित होता है कि महेन्द्रवर्मन प्रथम ब्रह्मा Brahma, ईश्वर और विष्णु के लिए भी एक मन्दिर बिना ईट, चूना, लोहे और लकड़ी की सामग्री के बनवाया। इस प्रकार महेन्द्रवर्मन प्रथम ने दक्षिण भारत में दरी मन्दिर बनवाने की प्रथा प्रचलित की। वास्तव में वह अनेक विरुदों (गुणों) में से चेत्तकारि अथवा चैत्यकारि अर्थात चैत्यों अथवा मन्दिरों का निर्माता है। इन मन्दिरों की विशेषता उनके त्रिमुखी स्तम्भों में थे। ये दरी मन्दिर दलवनुर Dalavanur (दक्षिण अर्काट जिला), वल्लम (Chingleput), सिय्यमंगलम Siyya-manga-lam और पल्लवरम Pallavaram आदि स्थानों में मिले हैं। वह अशोक की तरह धर्मावलम्बी और धर्म प्रचार के हेतु अनेक Temple walls और Pillars का निर्माण किया और उसमें अपने नाम, धर्म शासन पद्धति का उत्कीर्ण किया जिससे लोगों के हृदय में उसके प्रति तथा धर्म के प्रति प्रलोभन उत्पन्न हो जिससे उसका धर्म और कार्य सदा अमर रहे। इस प्रकार के कुछ नाम जो कि Pillar तथा walls पर खचीत थी। जैसे Gunabhara, Puru Shottama, Satyasanda, Vichitra-Chitta, Narendra, chettha-Kari lalitan-kura Satru-malla मंत्तविलास इस प्रकार के Surnames से अनुमान लगता है कि उसमें इस प्रकार के गुण लिप्त थे। इस प्रकार इसमें अच्छे अच्छे गुण यज्ञ के हेतु, सत्य परायण विविध कला के मूर्तिमान, मनुष्य के राजा, चित्र शिल्पी, ललित कला का जन्मदाता, शत्रु के साथ लड़ने वाला आनन्द के भोगी चित्र, नृत्य तथा गायन कलाओं को भी प्रोत्साहित किया।

भवन निर्माण के दृष्टिकोण से भी उनका नाम अद्वितीय है। Prof J Dubreuil ने Pallava के पूर्वकाल के अवशेष का अध्ययन किया तथा अन्य विद्वानों के मत के अनुसार Mahender काल के जो caves खोदे गये थे वह प्रायः पत्थरों के थे। महेन्द्र-

वर्मन प्रथम ने स्तम्भ-मण्डप बनवाये जो साधारण हाल Hall के समान है। जिनके पीछे की दीवार में एक दो कोठरियाँ बनाई गईं थीं। हाल के प्रवेश द्वार स्तम्भ पंक्तियों से बनाये गये। ये सभी वस्तुयें पहाड़ियों को काट-काटकर बनाई गईं। उनके जो स्तम्भ बने थे वह प्रायः घन आकृति की तरह थे। Cubical parts (Solid body with six equal Square faces) और वह भिन्न थी Prismatic Parts से (the faces are parallelograms or ends of which are equal and parallel plane figures) उसने अनेक मन्दिरों का निर्माण किया था। जो कि बहुत ही आकर्षणीय थे। Pillar का style बहुत ही उन्नत दशा में था और हम अनुमान लगा सकते हैं कि यह कितना कठिन कार्य था जो कि पत्थरों के टीलों को काट कर मन्दिर निर्माण करना और उसमें सुन्दर Pillars को सुसज्जित बनाना। यह Pillars 2 ft. चौकोर में विभक्त है। और उसकी ऊँचाई 7 Ft. है। ऊपरी और नीचे का हिस्सा Cubical की तरह है (Six equal square face) और बीच का हिस्सा कोण ऐसा बना हुआ है और मध्य के कुछ ऊपरी भाग Octagonal में विभक्त है cubical हिस्सों पर नाना प्रकार के बेल बूटों और कमल के फूलों से सुसज्जित हैं। जो Pillars कमल के फूलों से सुसज्जित हैं वह प्रायः Amaravati Stupa के Stone rails से मिलता-जुलता है। Pillars के शीर्ष प्रायः Brackets पर आधारित हैं।

Painting:—

इन Cave Temple के दिवालों, Pillars और verandha पर नाना प्रकार के चित्र चित्रित किए हुए हैं जो प्रायः Fresco Painting है। एक स्थान पर एक तालाब में अनेक कमल खिले हुए हैं। जो बहुत ही सुन्दर और मन को हरने वाले दृश्य हैं। इन चित्रों में जो रंग, ढंग का बोध होता है वह अत्यधिक सुन्दर है।

As a Author:—

महेन्द्रवर्मन प्रथम सर्वतोमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति था। अपने महान समकालीन उत्तरापथपति सम्राट हर्षवर्द्धन शिलादित्य की भाँति महेन्द्रवर्मन प्रथम भी एक प्रसिद्ध लेखक था। महेन्द्रवर्मन ने "मत्तविलास प्रहसन" नामक ग्रन्थ लिखा। महेन्द्रवर्मन ने नृत्य कला पर भी पुस्तक लिखी थी। इस राजा के Mamandur मामन्दूर अभिलेख में "दक्षिण-चित्र" नामक ग्रन्थ का उल्लेख मिलता है। जिसमें सम्भवतः चित्रकला तथा संगीत के सिद्धान्तों की व्याख्या की गई है। यह ग्रन्थ भी महेन्द्रवर्मन द्वारा लिखित बताया जाता है। Kudumiyamalai कुडमियाले का संगीत सम्बन्धी अभिलेख उसी का खुदवाया हुआ कहा जाता है और यह विश्वास किया जाता है कि वह संगीत में बड़ा निपुण था।

"मत्तविलास प्रहसन" में उसके विभिन्न गुणों का वर्णन इस प्रकार किया गया है।

> "प्रज्ञा दान दयानुभावधृत्यः कान्तिः कलाकौशलं,
> सत्य शौर्य समयता विनय इत्येवम्प्रकारागुणाः।
> अप्राप्त स्थितयः समेत्य शरंण याता यमेक कलौ,
> कल्पान्ते जगदादिमादिपुरुषसर्गप्रभेदा इव ॥"

नरसिंह वर्मन I

इस महान शासक के 30वर्ष तक राज्य करने के पश्चात और मृत्यु के उपरान्त उसका योग्य पुत्र नरसिंहवर्मन्न प्रथम राजा हुआ। यह पल्लव वंश का सबसे बड़ा और शक्तिशाली राजा सिद्ध हुआ। उसके शासन काल में चार मुख्य बातें प्रसिद्ध है।

1. Vatpi पर आक्रमण और विजय

2. Ceylon पर आक्रमण और वहाँ पर अपने मित्र को राजा बनाया।

3. Mamallapuram पर निर्माण कार्य।

4. Chinese pilgrim का Kanchipuram पर यात्रा।

चालुक्यों और पल्लव का सम्बन्ध:—

महेन्द्रवर्मन प्रथम के काल में Pulakesin द्वितीय ने Kanchi पर आक्रमण किया था। Aihole अभिलेख में इस प्रकार उल्लेख है। "the lord of the Pallavas to retreat behind the walls of Kanchipuram" Kuramplates of Paramesvara varman प्रथम में Pulakesin और Narasimhavarman प्रथम का संघर्ष का वर्णन मिलता है जिसमें Narasimhavarman ने Pulakessin को Pariyala, Manimangala और Suramara के युद्ध में पराजित कर दिया था। (Manimangala Modern village of Manimangalam जो कि स्थित है Kanchi के 20 M. पर। नरसिंहवर्मन के पिता को चालुक्य नरेश पुलकेशियन द्वितीय द्वारा पराजित होना पड़ा था। किन्तु गुणवान पिता के इस पराक्रमी पुत्र ने अपने पिता के प्रबल शत्रु पुलकेशिन को गहरी पराजय दी और इस प्रकार अपने पिता की हार का बदला लिया।

Vatapi पर चढ़ाई:—

नरसिंहवर्मन इस प्रकार अपनी सफलता से सन्तुष्ट न हुआ। और उसने अपने वीर सेनानायक सिरु-तोन्ड Siru Tonda उपनाम परन्जोति Paranjote के सेनापतित्व में एक सबल सेना वातापी पर आक्रमण करने के लिए भेजा। इस सेना ने चालुक्यों की राजधानी वातापी को घेर लिया। पुलकेशिन युद्ध में मारा गया। वातापी पर नरसिंहवर्मन का

अधिकार हो गया। अपनी इस विजय के उपलक्ष में नरसिंहवर्मन ने वातापी-कोंड की उपाधि धारण की। कहा जाता है कि कुछ समय पश्चात पुलकेशीन के पुत्र और उत्तराधिकारी विक्रमादित्य ने अपने नाना गंग नरेश दुर्विनीत की सहायता से नरसिंहवर्मन से युद्ध किया और उसे पराजित करके अपनी राजधानी वातापी का उद्धार किया। इस विषय पर मत-भेद है।

Ceylon पर आक्रमण:—

जिस समय नरसिंहवर्मन राज्य कर रहा था। उसी समय सिंघल का एक राजकुमार (Manavamma) मानवम्म उसके राज्य में आया। और नरसिंहवर्मन की सहायता से सिंघल का राज्य प्राप्त करना चाहा। फल-स्वरूप मानवम्म नरसिंहवर्मन के राज्य में रहने लगा। और वातापी के युद्ध में सहायता दी। इसके बदले में नरसिंहवर्मन प्रथम ने भी मानवम्म को सहायता दी और मानवम्म के साथ एक जहाजी बेड़ा सिंघल भेजा। लेकिन सिंघल वासियों ने मानवम्म को पराजित कर दिया। मानवम्म कांची लौट आया। नरसिंहवर्मन इस पराजय को सहन न कर सका। और उसने स्वयं एक विशाल सेना के साथ सिंघल पर आक्रमण कर दिया। और सिंघल पर विजय प्राप्त करके वहाँ अपने मित्र मानवम्म को राजा नियुक्त किया।

सिंघल विजय के उपरान्त नरसिंहवर्मन ने चोलों, चेर और पाण्डयों से भी युद्ध किया और उन्हें पराजित किया। इस प्रकार उसके शासन काल में पल्लव वंश बड़ा शक्तिशाली हो गया था। "There can be no doubt, however, that under him the Pallava power attained a strength and prestige which it had not known since its revival under Simhavishnu 575-600 (Shri. Sastri)

Monuments of Narsimhavarman I :—

नरसिंह वर्मन को भी अपने पिता की भाँति अपने राज्य भर में मन्दिर बनवाने का शौक था। त्रिचनापल्ली Trichino poly जिले और पुदुकोटा Pudukotta रियासत में उसने चट्टानों को खुदवाकर अनेक मन्दिरों का निर्माण कराया था। इन मन्दिरों का साधारण नक्शा प्राय: वही है जो अपने पिता के द्वारा बनवाये हुये नक्शों के समान है। इन मन्दिरों का ऊपरी हिस्सा अधिक अलंकृत है और उनके स्तम्भ भी अपेक्षाकृत अधिक सुन्दर है।

According to A.H. Longhurst :–

On plan the interiors are much the same as those of the cave temples of the Mahendra style, with similar small square shrine chambers cut in the back wall which are usually free from ornament within. The pillared hall in front of the shrine often contains large panels cut in the side walls filled with sculptural figures in high relief.

नरसिंह वर्मन प्रथम ने अपने राज्य के प्रमुख नगर मामल्लपुरम (महाबलिपुरम) में भी मन्दिरों का निर्माण किया जो धर्मराज रथ मंदिरों से मंडित है। धर्मराज रथ सप्त मंडपीय (Seven Pagodas) में से एक माना जाता है। धर्मराजरथ प्राय: अपने पिता के द्वारा निर्मित Mahendra Vadi मन्दिर के तुल्य है।

Chinese Pilgrim का यात्रा :—

नरसिंह वर्मन प्रथम के शासन काल में प्रसिद्ध चीनो यात्री ह्वेन साँग Hiuen-Tsang 642 A. D. में Pallava के राजधानी गया

और वहां कुछ काल तक ठहरा। उसके अनुसार देश जिसकी राजधानी किन-चु-पु-लो (काञ्चीपुर) था, त-लो-पी-च (द्रविड़) कहलाता था। यह परिधि में 6000 ली (Li) था। यात्री लिखता है कि "भूमि उर्वर है, नियम से जोती जाता है और प्रभूत अन्न उत्पन्न करता है। वहाँ फूल और फल भी अनेक प्रकार के होते हैं। बहुमूल्य रत्न और अन्य वस्तुएँ वहाँ उत्पन्न होती है। जलवायु उष्ण है और प्रजा साहसी है। लोग सत्य प्रिय और ईमानदार है और विद्या का बड़ा आदर करते हैं। यहाँ की भाषा और लिपि में मध्य देश की भाषा और लिपि से विशेष अन्तर नहीं है। वहाँ १०० से अधिक विहार (संघाराम Sangharamas) है जिसमें १० हजार से अधिक भिक्षुक रहते हैं। इनके अतिरिक्त वहाँ ४०० अन्य धर्मावलम्बियों के भी ८० मन्दिर थे। इनमें से अधिकांश जैन मन्दिर थे। काँची के समीप बौद्धों का सबसे बड़ा विहार था।" नरसिंह वर्मन ने ६३० से ६६८ तक राज्य किया।

Mahendra Varman II :-

नरसिंह वर्मन प्रथम के मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र महेन्द्र वर्मन द्वितीय सिंहासन पर बैठा। इसे चालूक्य नरेश विक्रमादित्य ने पराजित किया। इसने केवल दो वर्ष तक राज्य किया। इसकी मृत्यु ६७० में हो गई।

Paramesvara Varman I :-

Mahendra Varman II के पश्चात उसका पुत्र Paramesvara Varmans I सिंहासनारूढ़ हुआ। इसके समय में भी पल्लव—चालुक्य संघर्ष जारी रहा। Gadval plales of Vikramaditya I (चालुकय लेख) से यह प्रमाण मिलता है कि चालुकय नरेश विक्रमादित्य प्रथम ने परमेश्वर वर्मन पर आक्रमण किया। परमेश्वर वर्मन को विक्रमादित्य के आगे सर झुकाना पड़ा और उसकी

परमेश्ववर्मन II

नरसिंह वर्मन के पश्चात उसका पुत्र गद्दी पर आया। उसके राज्य काल में चालुक्य-युवराज विक्रमादित्य द्वितीय ने कांची पर आक्रमण कर दिया और इस युद्ध में परमेश्वर वर्मन पराजित हुआ। बदला लेने के लिए परमेश्वरवर्मन ने पुनः चालुक्य पर आक्रमण किया लेकिन इस बार भी वह पराजित हुआ और मारा गया। उसका समय ७२२ से ७३० तक रहा वह भी निर्माण कार्य में रुचि रखता था। वेरुपालयम पत्रों में उसके लिए लिखा है कि उसने मनुस्मृति के आदेशानुसार शासन किया।

परमेश्वरवर्मन द्वितीय की मृत्यु के उपरान्त उसके राज्य में सिंहासन के उत्तराधिकारी के लिये गृह कलह आरम्भ हो गई। इन कलहों से ऊबकर जनता के प्रतिनिधियों तथा राज्य के प्रमुख पदाधिकारियों ने उसके (परमेश्वरवर्मन द्वितीय) वंश की उपशाखा के राजकुमार नन्दिवर्मन द्वितीय को सिंहासन पर बैठाया। Kasakkudi कसक्कुडी plates of Nandivarman से भी विदित होता है कि प्रजा ने सिंहविष्णु के भाई भीमवर्मन के वंशज हिरण्यवर्मन Hiranya Verman के जनप्रिय पुत्र नन्दिवर्मन द्वितीय को सिंहासन पर बैठाया।

Genealogy of Sub line (उपशाखा)

Bhimavarman
|
Buddhavarman
|
Adityavarman
|
Govindvarman
|
Hiranyavarman
|
Nandivarman II

Genealogy of subline (उपशाखा)

Dantivarman
|
Nandivarman III
|
Aparajita

नन्दिवर्मन द्वितीय

उसके राज्य काल की मुख्य घटनाओं का ज्ञान उसके निम्न दानपत्रों से विदित होता है।

1. Kasakkudi plates dated in 22 years of his reign and Korrangudi plates 58 years of his reign furnish the details of his personal accomplishments and the culture of the period.

2. Udayendiram plates 21 years of his reign gives valuable information regarding mililary achievements.

3. Vakkaleri plates of Kritivarman furnish the details information to the invasion of Kanchi by the Chalukyan.

The Chalukyan Invasion of Kanchi :-

चालूकयो और पल्लवों का संघर्ष नरसिंहवर्मन द्वितीय के समय से शान्त पड़ गया था लेकिन नन्दिवर्मन द्वितीय के समय में चालुकय पल्लव संघर्ष पुनरुज्जीवित हो उठा इसका मुख्य कारण यह है कि परमेश्वरवर्मन द्वितीय की मृत्यु के बाद गृह कलह हो जाने पर चालुकयो ने इसका फायदा उठाते हुए पुनः पल्लव राज्य पर आक्रमण करने का निश्चय किया। इस समय नन्दिवर्मन अच्छी परिस्थित में न था इस कारण चालुकय नरेश विक्रमादित्य द्वितीय ने नन्दिवर्मन के ऊपर आक्रमण करके

उसे भयसंत्रस्त कर दिया। विक्रमादित्य द्वितीय के Kendur Plates में वर्णन है कि उसने कांच को कुछ दिनों तक अपने अधिकार में रखा। लेकिन यह बहुत दिन तक सफल न रही। नन्दिवर्मन ने शीघ्र ही अपनी परिस्थित को सँभाल लिया और शक्ति संचय कर शत्रुओं को मार भगाया। और कांची को विदेशियों के हाथ से स्वतंत्र किया कुछ समय राज्य करने के पश्चात और अपने शासन के अन्तिम चरण में विक्रमादित्य ने पुनः कांची पर आक्रमण करने के लिये अपने पुत्र कीर्तिवर्मन को भेजा। नन्दिवर्मन ने कीर्ति वर्मन को रोका और भयंकर युद्ध किया लेकिन विजय कीर्तिवर्मन के हाथ में रही। Kendur Plates के अनुसार कीर्तिवर्मन के विजय प्राप्त करने के पश्चात विक्रमादित्य वहुसख्यक हाथी, सोना और प्रचुर सम्पत्ति लेकर अपने राज्य में वापस आया।

Other compaigns of Nandivarman II :—नन्दि वर्मन का सम्पूर्ण समय युद्ध और सैनिक व्यवस्था में ही व्यतीत हुआ। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है। जब वह गृहकलह से मुक्त हो कर गद्दी पर आया तो उसी समय Wastern Chalukya ने Kanch पर आक्रमण कर दिया जो कि Kendur plates से बोध होता है। फिर Kanchi को मुक्त करके Pandya और गंगराज पर आक्रमण किया।

Pandya पर आक्रमण :—

नन्दिवर्मन ने चालुक्यों से युद्ध करने के पश्चात अन्य रण अभियान किया। जिस समय नन्दिवर्मन अपनी शक्ति संचय कर रहा था उस समय Pandya नरेश राजसिंह प्रथम भी अपनी शक्ति बढ़ा रहा था। नन्दिवर्मन द्वितीय उसकी शक्ति को दमन करने के लिये आगे बड़ा और राजसिंह प्रथम के ऊपर उसने आक्रमण किया परन्तु नन्दिपुर नामक स्थान पर जहाँ पर वह ठहरा हुआ था, वहाँ शत्रु ने उसे घेर लिया लेकिन उसी समय नन्दिवर्मन का वीर सेनाध्यक्ष उदयचन्द्र ने उसकी रक्षा

की और शत्रुओं को अपने ओर आकर्षित करके नन्दिवर्मन को बचाया लेकिन राजसिंह ने नन्दिवर्मन के संघ के सभी सदस्यों को परास्त करके उसे छिन्न-भिन्न कर दिया था जो नन्दिवर्मन ने आस पास की छोटी जातियों के साथ मिलाकर एक संघ बनाया था।

नन्दिवर्मन द्वितीय के उदयेन्दिराम लेखों में उदयाचन्द्र को सैन्य सफलताओं का उल्लेख किया गया है।

गंगराज पर आक्रमण :—

नन्दिवर्मन के शासन काल में उसके सैनिक शक्ति का परिचय मिलता है। उसके शासन काल में Chalukyas, Pandyas, Gangas और Rashtra Kuta के साथ सामना करना पड़ा। इन महान शक्तियों के साथ युद्ध करना कोई आसान काम था। उस समय यह सभी राज्य शक्तिशाली थे। नन्दिवर्मन ने गंगराज श्रीपुरुष से भी युद्ध किया लेकिन युद्ध का क्या कारण था इसका ठीक तरह से ज्ञान प्राप्त नहीं है। Tandantottam plates से बोध होता है कि उसने बहुमूल्य गहने और मणियुक्त वस्तुयें लाया जो कि Ugrodaya से पुकारा जाता है। "Of him it is recorded that he took away unnamed Gang-King a neck ornament which contained in it the gem called ugrodaya (Tandantottam plates.)

Rashtrakuta Invasions on Kanchi:—

काञ्ची राष्ट्रकूटों से भी अछूत न रही। राष्ट्रकूटों ने भी कांची पर आक्रमण कर दिया। Kadaba plates में इस प्रकार वर्णन है। "Vayiramega as a surname of Dantidurga Rashtrakuta"

Bagumra plates of Govinda III के अनुसार हमें पता चलता है कि Dantidurga ने पहले दक्षिण के निचले (Lowermost Southern country) प्रदेश पर आक्रमण किया

फिर Madhyadesa की ओर बढ़े अन्त में Kanchi पर आक्रमण किया। लेकिन इस आक्रमण के पश्चात दोनों शक्तियों में सुलह हो गई। राष्ट्रकूट नरेश दन्तिदुर्ग ने अपनी कन्या रेवा का विवाह नन्दिवर्मन के साथ कर दिया और उसके साथ मैत्री पूर्ण संबंध स्थापित किया। Velurpalayam plates से हमें पता चलता है कि नन्दिवर्मन की पत्नी का नाम Reva था और उससे एक लड़का उत्पन्न हुआ जिसको Dantivarman के नाम से पुकारा जाता है।

उसने सब शत्रुओं का नाश किया और उसका हाथी चारों समुद्र (oceans) तक पहुँच गया था। उसने सब प्रकार के हथियारों weapons का व्यवहार में लाया। उसकी युद्ध प्रशंसा Tandantottam plates के 2 Verse में इस प्रकार की गई है।

"From him (Hiranya Varman) was born the wise and the prosperous king called Nandi Varman who was the home of prowess and conqueror of hoards of his enemies; whose victorious elephant reached almost the shores of four oceans; whose fame extended to the four quarters and who was praised in battle for his knowledge in the use of all weapons."

नन्दिवर्मन द्वितीय एक महान शासकों में गिना जाता है। अपने शासन काल में वह सैन्य कार्य चढ़ाइयों और आक्रमणों में लीन रहा। Shri R. Gopalan के अनुसार "The reign of Nandivarman II appears to have been almost literally crowded with military engagements, sieges, invasions and counter- invasions"

लेकिन उसने निर्माण कार्यों और धर्म में भी अभिरुचि प्रदर्शित की है। उसने अनेक मन्दिरों का निर्माण कराया। जिससे अनुमान लगता है कि वह धर्म के साथ साथ भवन निर्माण में भी रुचि रखता था। उसने अपनी राजधानी कांची में मुक्तेश्वर मन्दिर का निर्माण कराया। कांची के प्रसिद्ध

मन्दिर बैकुण्ठ पेरुमल भी उसी के द्वारा निर्मित बताया जाता है। यह मन्दिर भवन कला कि दृष्टिकोण से अत्याधिक सुन्दर और रुचि पूर्ण है।

धर्म:—

नन्दिवर्मन स्वयं वैष्णव था। According to Gopalan "His copper-plates decribe him as never accustomed to bowing excepting to the pair of workshipful feet of mukunda (Vishnu) as worshipping the feet of Hari" वह Vishnu के चरणों को पूजता था और Vishnu अराधना करता था, वह कहता था कि Hari मेरा सब कुछ है। वह मेरे सुख और दुःख का दाता है। वह Vishnu का परम भक्त था। उसी के समय में प्रसिद्ध वैष्णव आचार्य तिरुमंगई आलवार हुये थे जिनकी रचनायें "नालापिर-प्रबन्धम" में संग्रहीत है।

राज्य में शिक्षा की उन्नति :—

उसके राज में शिक्षा की बड़ी उन्नति हुई। वह विद्या प्रेमी तथा स्वयं भी महान विद्वान था। Kasakkudi plate और Tandanto-ttam से ज्ञात होता है कि वह चारों वेदों (Vedas) और छे angas का गुरु था। उसके तण्डोत्तम Tandantottam पत्र लेखों में उसकी कलानुरागिता तथा काव्यकलानिपुणता का उल्लेख किया गया है। उसको काव्य का महान पन्डित कहा गया और उसकी तुलना आदिकवि वाल्मीकि से की गई है।

Nandivarman सब विषयों में दक्ष था। अगर हम उसे एक महान राजा की संज्ञा दें तो अनुचित न होगा। उसकी महानता का तुलना इस प्रकार कि जाती है। सब राजाओं के राजा जो कि देवताओं के राजा इन्द्र Indra के समान तथा काव्य में Valmiki के समान और Dharma में Yudhishtira के समान है। Kasakkudi plates के 29 Verse में उसकी महानता की सिद्धि इस प्रकार की गयी है।

"This Sridhara (Pallavamalla) resembles Vijaya in battle, Karnisuta, in acquaintance with the arts, Rama in archery, the king of vatsa with reference to the seience of elephants and to music, Kama in the opinion of women, the first poet (Valmiki) in the composition of poetry, the master of policy (Brhaspati) himself in suggesting espe dients and (Dharme) Yudhishtira in delighting the subgects"

नन्दिवर्मन ने ६५ वर्ष तक सफलता के साथ कांचीं पर राज्य किया। ६५ वर्ष के राज्य काल में उसका अधिक समय युद्ध में व्यतीत हुआ और बाकी समय अन्य कार्य में योग दान दिया।

नन्दिवर्मन के वाद उसके वंशावलि ने भी कांची पर एक के वाद एक राज्य किया लेकिन नन्दिवर्मन के पूर्वजों ने कांची पर राज्य किया था नहीं यह ठीक तरह से ज्ञान प्राप्त नहीं है। यद्यपि नन्दि वर्मन के चचेरे भाईयों ने कांची पर राज्य किया इसका उल्लेख Kasak Kudi में है।

दन्तिवर्मन

नन्दिवर्मन द्वितीय के वाद उसका पुत्र दन्तिवर्मन कांची की गद्दी पर बैठा। नन्दिवर्मन द्वितीय को राष्ट्रकूटवंशीय पत्नी रेवा की तुलना (Reva) गंगा से की गई।

According to Velurpalayam plates verse 16. "Like the river Reva had birth from a great king (from a high mountaint). Dantivarman is stated to be 'a mainfestation of the Lotus-eyed Vishnu himself, who was the delight of the earth whose object was the protection of the three worlds and in whom the group of purer qualities such as prowess charity, and gratitude, attained eminence, as it were after a long time enjoying the pleasure of each others company"

दन्तिवर्मन का विवाह एक Kadamba राजकुमारी Aggala-nimmati से हुआ था।

दन्तिवर्मन के समय पाण्डय नरेश वरगुण-महाराज (Varaguna-maharaja) और उसका पुत्र श्रीमार ने क्रमशः आक्रमण किये और इसके राज्य के (कांचि के) कुछ दक्षिण प्रदेशों को छीन लिया।

राष्ट्रकूट-नरेश गोविन्द तृतीय ने भी कांचि पर आक्रमण किया और दन्तिवर्मन को पराजित कर दिया।

दन्तिवर्मन Bharadvaja Gotra का था। Garbhagrha मन्दिर में दन्तिवर्मन की प्रशंसा इस प्रकार खुदी हुयी है।

"The ornament of the Pallave family"

नन्दिवर्मन III

दन्तिवर्मन के बाद उसका पुत्र नन्दिवर्मन तृतीय राजा हुआ। वह भी एक शक्तिशाली राजा था। इसके पिता के समय से पाण्डवों ने कावेरी प्रदेश को अपने अधिकार में रक्खा था किन्तु अब उसे उस प्रदेश से हाथ धोना पड़ा। नन्दिवर्मन तृतीय ने पाण्डवों पर आक्रमण किया तथा तेलल्लरु Tellaru नामक स्थानों पर नन्दिवर्मन तृतीय और श्रीमार पाण्डय से घमासान युद्ध हुआ। श्रीमार पराजित हुआ और इस भयंकर युद्ध में सफलता के हेतु नन्दिवर्मन तृतीय का एक उपनाम नेलरूरेन्द्र नन्दिवर्मन तृतीय पड़ा (Tellarrerinda Nandivarman) नन्दिवर्मन क विजय तथा भयंकर युद्ध का वर्णन तामिल ग्रन्थ "नन्दिक कलम्बकम" में किया गया है। (Nandik-Kalambakam) तामिल ग्रन्थों में उसके कुछ उपनाम प्राप्त होते हैं। जैसे Avani-Naranan, Varatungan, manodaya और Ugrakopan उसके पास

एक शक्तिशाली जहाजी बेड़ा था इसके फलस्वरूप उसने बृहत्तर भारत के साथ भी सम्बन्ध स्थापित कर रखा था। श्याम के एक अभिलेख में नन्दिवर्मन का नाम उल्लेख है।

Bahur plates के 14Verse के अनुसार उसने राष्ट्रकुट वंश की एक "Sanka" नामक राजकुमारी के साथ विवाह किया जो बहुत ही गुणवान दयावान तथा Lakshmi की तरह था।

Velurpalayam plates के अनुसार वह Siva की भक्त थी।

नृपंतुगवर्मन

नन्दिवर्मन तृतीय का पुत्र नृपतुंगवर्मन उत्तराधिकारी के रूप में राजगद्दी प्राप्त किया जो कि Nripatungavikramavarman से परिचित था। इसके समय में भी पाण्डय नरेश श्रीमार के साथ युद्ध हुआ। इस युद्ध में भी श्रीमार पराजित हुआ। इसने अपने राज्य की सीमाओं को दक्षिण Pudukotta और उत्तर के Gudimallam तक फैलाया।

उसके समय में शिक्षा की बड़ी उन्नति हुयी उसके बहुत से पत्रलेखों से विदित होता है कि उसके लिए मंत्री ने Vedic college के Chettu-pakkam, Iraipunaicheri और Vilangattang-aduvanur pondichegi नामक तीन ग्राम दान दिये थे। इस विद्यालय में देवशास्त्रों का अध्ययन किया जाता था।

यह विद्यालय बड़े २ विद्वानों के द्वारा नियंत्रित होता था। यह १४ भागों में विभक्त था जिसमें Vedas (4), Angas (6), mimam-

sa (1), Nyaya (1) Purana (1) और Dharma Sastra [1] के वि यों में शिक्षा दी जाती थी।

अपराजितवर्मन

अपराजितवर्मन यह पल्लव वंश का अन्तिम शासक था। यह नृपतुंगवर्मन का पुत्र था और युवराज के रूप में अपने पिता के प्रशासन में योग देता रहा। इसने भी पाण्ड्य राजा वरगुण द्वितीय को पराजित किया। इस युद्ध में गंग नरेश पृथ्वपति प्रथम से Aparajita varmon को सहायता लेनी पड़ी थी। नवी शताब्दी के अन्तिम समय में चोल नरेश आदित्य प्रथम ने अपराजित वर्मन पर आक्रमण कर दिया और युद्ध में इसे मार डाला। इसके बाद भी पल्लव शासक इतना शक्तिशाली नहीं था जो कि पल्लव को मुक्त करता, फलस्वरूप पल्लव राज्य का अन्त हो गया।

चोल (100 A.D.—1050 A.D.)

चोल वंश :—चोल वंश भारत का एक अति प्राचीन वंश प्रतीत होता है। महाभारत चोल जाति से परिचित है। मेगस्थनीज ने भी इसका उल्लेख किया। कुछ विद्वानो के अनुसार बिन्दुसार ने चोलो को जीतने का प्रयत्न किया था। परन्तु उसे सफलता न मिली थी। अशोक के अभिलेखो में चोड़ों (chode) (चोलो) का उल्लेख अन्त राज्यों (सामान्त राज्यो) में किया गया है। यहां चोलो का उल्लेख बहुवचन में किया गया है। इससे प्रकट होता है कि चोलो का केवल एक राज्य ही नहीं था। बल्कि दो राज्य थे। इसकी पुष्टि टालमी से हाती है। उसके अनुसार एक राज्य सोर नागो (चोल नागो) का था। इसकी राजधानी (othaora) ओथौरा थी दूसरे राज्य की राजधानी अर्कटोज थी। काल्डवेल के अनुसार अर्कटोज आधुनिक आर्काट था। पेरिप्लस ने भी चोल प्रदेश के बन्दरगाहो का उल्लेख किया है। अशोक के अभिलेखो में चोल राज्य के साथ-साथ लंका का भी नाम लिया है। इनसे अनुमान होता है कि दोनो में घनिष्ठता रही होगी। दक्षिणी राजवंशो के लेखो एवं तत्कालीन साहित्य में तो इन राज्यों का बार-बार उल्लेख हुआ है अभिलेखों में इन्होंने अपने को सूर्य वंशी क्षत्रिय बतलाया है।

साहित्यक साधनों के अधार पर (chola) का उदय Ist century B.C. में हुआ और इसका प्रभाव Ist century A.D. के अन्त तक रहा। चोल राजाओ का उल्लेख केवल Tamil कविता से बोध होता है। चोल राजाओं की कीर्ति और यश—Tamil कविताओं से वर्णन मिलता है।

द्वितीय शताब्दी में (190AD) चोलों का सर्व प्रमुख राजा करिकाल Karikala था। तामील साहित्य में इसके पिता का नाम Ilanget-kenni इंलजेटकेन्नि बताया गया है। वह एक शक्तिशाली और वीर योद्धा था उसका पुत्र Karikala अपने पिता से अधिक शक्ति शाली वीर और महत्वाकांक्षी सिद्ध हुआ। Karikala सम्पूर्ण दक्षिण पर राज्य करने के लिये सेना संगठन करने लगा और आस-पास के राज्य को जीतना आरम्भ कर दिया लेकिन उसके शत्रु ने उसे बन्दी बना लिया। इससे Karikala न केवल बन्दी मुक्त होने का प्रयत्न किया बल्कि उन सब शत्रुओं को हरा कर सम्पूर्ण दक्षिण पर अपना प्रभुत्य जमा लिया। जिस समय Karikala अपना शक्ति संचय कर रहा था उसी समय Pandya और चेरो ने उसकी बढ़ती हुई शक्ति को देखकर उसके विरूद्ध एक संघ बना लिया। Karikala ने 11जातियों के सरदारों को लेकर Venni वेण्णि के प्रसिद्ध युद्ध में उन सब को परास्त कर दिया। यह Venni के प्रसिद्ध युद्ध जो लड़ा गया था वह 15 M. Tanjore के पूर्व मे स्थिति था। इस महा युद्ध में सफल होने से वह सम्पूर्ण Tamil राज्य का अधिकारी बन बैठा। और छोटे छोटे राज्य और जातियों को अपनी अधीनता को स्वीकार करने के लिये मजबूर किया।

Karikala और चेर वंश से पुनः मैत्रतापूर्ण संबंध :—Shilpa-di-Karam शिलप्पदिकारम की एक कथा के अनुसार इस भयंकर युद्ध के पश्चात् Karikala ने अपनी पुत्री आदि मन्दि Adi Mandi का विवाह एक चेर राजकुमार (Atti) अत्ति के साथ कर दिया था। यदि यह सत्य है तो इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि प्रारम्भिक युद्ध के पश्चात Karikala ने चेर वंश के साथ मित्रता करली थी। पट्टिनप्पालई (Patti-Nappa-Lai) नामक एक तामिल कविता से प्रकट होता है कि करिकाल ने निम्न वंशो पर सफलता प्राप्त किया

था। Karikala ने ओलियर (Oliyar) के विरुद्ध हमला कर दिया और अपने राज्य में शामिल कर लिया। उस समय Karikala की शक्ति अत्याधिक थी। इस वंश पर अपना प्रभुत्व कायम करने के पश्चात् उसने Aruwalar अरुवालर पर चढ़ाई की और बहुत ही कुशलता के साथ उस पर विजय प्राप्त की और अन्त में उसने (Erugobale) इरु गोवेल वंश के विरुद्ध भी सफलता प्राप्त की थी। Karikala सम्पूर्ण (Tamil) राज्य का शासक बनने के पश्चात उसने अपना ध्यान Ceylon (लंका) पर डाला। उसने लंका पर आक्रमण कर दिया। उस समय लंका वासी उतने शक्तिशाली नही थे जो कि उसका मुकाबला करते। फलस्वरूप उसने लंका वासियों को हराकर वहाँ से १२,००० मनुष्यों को अपने साथ राज्य में ले आया। अपनी इन विजयों के परिणाम स्वरूप करिकाल ने तामिल देश में अपनी धाक जमा ली।

Shifted his Kingdom:–जिस समय Karikala Chola राज्य का शासक बना उस समय उसकी राजधानी ओथौरा थी। कुछ समय पश्चात Karikala ने ओथौरा का परित्याग कर कावेरी, पड्डिनम (Kavere Paddinam) नामक नई राजधानी की स्थापना की थी।

Achievement of Karikala –तामिल साहित्य से प्रगट होता है कि करिकाल ने सार्वजनिक कार्य और सुविधा के लिये अनेक निर्माण कार्य भी किये। प्रथम कार्य उसने वन्य प्रदेशों को साफ कर खेती के लिये उपयोगी बनाया तथा Kaveri delta के पानी को नियन्त्रण किया तथा जिस स्थान पर पानी का प्रबन्ध नही था उन स्थानों पर पानी पहुंचाने की व्यवस्था किया। साथ ही साथ सिंचाई के लिये अनेक तालाबों और नहरों का निर्माण कराया। फलस्वरूप भूमि उर्वर होने लगी और देश धनधान्य से पूर्ण हो गया। अनाज की कमी

नहीं थी। बाढ़ को रोकने के लिये उसने कावेरी के किनारे बाँध भी बनवाये जो कि Vennar के नाम से प्रसिद्ध था जो कि Tanjor के दक्षिण में स्थित था।

दूसरा महत्वपूर्ण कार्य यह था कि Karikala ने ceylon पर हमला करके वहाँ से 12,000 लंकावासियों को अपने साथ लाकर इनकी सहायता से उसने अपने राज्य में Kaberi के मुहाने में Puhar नामक नगर का दुर्गीकरण कराया।

Religion:—Karikala ब्राह्मणधर्मावलम्बी था और उसने अनेक यज्ञ किये थे। दान, आदि करते थे। लोगों को सहायता करते थे। लेखों में दान का परिचय मिलता है। जब उसने Ceylon पर आक्रमण किया और 12,000 Ceylonese को बन्दी बना कर अपने राज्य में लाया था तो उनके साथ बुरा व्यवहार नहीं किया था बल्कि उन लोगों को कार्य में लगा दिया जिससे देश के कार्य में सफलता प्राप्त हुई और जनहित की भलाई हुई।

वह वादों का पक्का था। उसका न्याय बहुत ही अच्छा होता था। किसी प्रकार का पक्षपात नहीं करता था। लोगों को उचित दंड देता था। अन्याय को सहन नही कर सकता था। अत्याचारी नही था। जन हित के लिये उसका हृदय सर्वदा व्याकुल हो उठता था और शांतिमय था। धर्म पर अत्याचार नही करता था। इसलिये Tamil कवियों ने उसकी महानता को देख कर अपनी कविताओं में वर्णन किया। S. K. Aiyangar लिखते हैं:–"Also on the whole, Karikala stands out among the early Tamil rulers as a Striking personality, great alike in pursuits of war and peace."

The famous scholar Naccinarkkiniyar says that Karikala married a Velir girl from Nangur, a place

celebrated in the hymns of Tirumangai Alvar the heroism of its warriors.

नेदुयुदुकिल्लि

Karikala के पश्चात उसका पुत्र नेदुयुकिल्लि चोल वंश का राजा हुआ। वह अपने पिता के समान उतना शक्तिशाली नहीं था जिससे वह अपने राज्य को सुरक्षित न रख सका। इस कारण इसका काल चोल वंश के लिये पतन काल था। Karikala ने अपने भुज बल के द्वारा चोल राज्य को फैलाया था साथ ही साथ Pandya और Chera को दबाकर रखा था। उसकी मृत्यु के पश्चात जब उसका पुत्र गद्दी पर आया तो वह इतने बड़े राज्य को सम्भाल न सका। इसका मूल कारण यह था कि वह कमजोर तथा जनप्रिय नहीं था, न ही उसे युद्ध रचने की कला का ज्ञान प्राप्त था। इस फायदे का लाभ उठाते हुये अन्य राज्यों ने उन पर हमला कर दिया और Pandya और Chera ने पुनः अपना सिर उठाया और चोल राज्य पर आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया। उसी समय एक नये वंश का उदय हुआ जो कि बड़ी तेजी के साथ बढ़ता चला आ रहा था। वह पल्लव वंश था। चोल पल्लवों की बढ़ी हुई शक्ति का भी सामना न कर सका। सम्भवतः चोलों की नौ सेना भी निर्बल हो गई थी। इसी से समुद्री डाकुओं ने उनकी राजधानी पर आक्रमण किया और उसे नष्ट भ्रष्ट कर दिया। कहा जाता है कि कलभ्रों ने चोल राजाओं से राजनीतिक शक्ति छीन लिया था। इसके वाद चोल वंश का एक राजा Kanchi (Kanchipuram) पर राज्य करता था जिसका नाम Tondaiman Ilandiraiyan था। यह सम्भवतः Karikala का समकालीन था। कुछ विद्वानों के अनुसार यह Karikala का पौत्र था। कुछ विद्वानों का कथन है कि यह Tondai का स्वतंत्र राजा था। कुछ विद्वानों का मत है कि Tondai पर राज्य करने के लिए Viceroy ने इसको नियुक्त किया था। कुछ भी हो

Chera Chola और Pandya की तरह यह भी एक स्वतन्त्र राज्य था। यह अनुमान लगाया गया है कि यह Tondai Pallava की एक शाखा थी। जो कि Pallava शासक बाद के काल में Tondaiman dalam से पनप आया। लेकिन Tondaiyar के राज्य और Pallava के राजा का सम्बन्ध अनिश्चित है।

राजा Ilandiraiyan के बारे में हम लोगों को अधिक ज्ञान प्राप्त नहीं है। इतिहास इसके बारे में मौन है।

पेरुनर किल्ली भी चोल वंश का एक शक्तिशाली शासक था। जिसने राजसूय यज्ञ किया था। तामिल राजाओं में केवल पेरुनर किल्ली को ही राजसूय यज्ञ करने का गौरव प्राप्त था। कोच्चनगणन नामक चोल नृपति ने भी करिकाल की भाँति पर्याप्त ख्याति अर्जित की।

THE RISE OF VIJAYALAYA, ADITYA I AND PARANTAKA I

(850 A D–955)

850 A. D. के लगभग चोलों की शक्ति पुनः प्रतिष्ठित हुई। इस शक्ति की पुनः स्थापना विजयालय ने की। इन्होंने पान्डयों से तंजौर छीन लिया और वहाँ एक दुर्ग निर्माण किया।

विजयालय के पश्चात आदित्य I सिंहासन पर बैठा। इस वंश को और सुदृढ़ करने के लिये पल्लवों से युद्ध किया और पल्लव नरेश अपराजित को पराजित कर दिया। गंग नरेश पृथ्वीपति II ने उसकी अधीनता स्वीकार कर लिया उसके पश्चात पाण्ड्य नरेश परान्तक वीर नारोयण पर भी आक्रमण करके इसे पराजित कर दिया। फिर राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण II की पुत्री के साथ विवाह किया और चेर वंश स्थाणुरवि की पुत्री के साथ अपने पुत्र परान्तक का विवाह कर दिया। इस प्रकार हम

देखते हैं कि वह आक्रमण और वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करके चोल वंश को खूब दूर तक फैलाया।

आदित्य I के बाद परान्तक प्रथम सिंहासन पर बैठा उसने राज्य विस्तार करना प्रारम्भ कर दिया। उसने पाण्ड्यों के नरेश मारवर्मन राजसिंह II को पराजित कर दिया। मारवर्मन ने पुनः लंका के राजा कस्सप V से सहायता लेकर उससे युद्ध किया। परान्तक ने दोनों को वेलर के युद्ध में पराजित कर दिया। परान्तक ने राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण III के साथ युद्ध किया और उसे पराजित कर दिया किन्तु कुछ समय पश्चात् कृष्ण III ने तक्कोलम के युद्ध में परान्तक को पराजित कर दिया। परान्तक के मृत्यु के पश्चात् से 30 वर्ष तक का समय चोल वंश का पतन काल था। परान्तक का समय 907 से 955 A.D. तक है और 955.A.D से 985 तक पतन काल माना जाता है।

Rajaraja The Great 985—1014

राज राज ने चोल वंश की पुनः प्रतिष्ठा करके इस वंश का गौरव पराकाष्ठा पर पहुँचा दिया। इसके समय में इस वंश की जड़ खूब मजबूत हुई जिसको आसानी से उखाड़ने के लिये किसी नरेश की भुजा में इतनी ताकत नहीं थी।

Vanavan–Mahadevi ने राजराज को जन्म दिया। यह परान्तक II का पुत्र था। इसका नाम अरूमोलिवर्मन था। सिंहासन पर बैठने के उपरान्त उसने राजराज उपाधि धारण की। उसका जीवन काल युद्ध में व्यतीत हुआ। उसने सम्पूर्ण समय चोल वंश की प्रतिष्ठा के लिये अपने को बलिदान कर दिया। इसने ३० वर्ष के राज्य काल में अनेकों राजाओं का पराजित करके अपने वंश के राज्य को एक बड़े साम्राज्य में परिवर्तित कर दिया। इसलिये इतिहास में आज भी उसका नाम अमर है। Shri, Sastri

"The thirty years of his rule constitute the formative period of Chola imperialisim. A relatively small state at his accession, hardly recovering from."

Tiruvalangadu plates के आधार पर उसके दिग्विजय का अनुमान लगता है।

Pandya के साथ युद्ध:—राजराज ने पहले Pandya पर आक्रमण किया था। उस समय पाण्ड्य नरेश अमरभुजंग राज्य कर रहा था। राजराज ने उसे पराजित करके बन्दी बना लिया।

बहुत दिनों से पाण्ड्य, चेर और सिंघ राज्य चोलों के विपक्ष में अपना झंडा ऊँचा किये हुये थे और राजराज के समय में भी उसके विरुद्ध सर उठाया। इसलिये राजराज ने पाण्ड्य को पराजित करके चेरों पर आक्रमण कर दिया। उस समय चेर नरेश Bhaskara Ravi-Varman राज्य कर रहे थे। राजराज ने उसे पराजित कर दिया तथा उनका जहाजी बेड़ा नष्ट कर दिया।

लंका:—लंका भी चोलों का शत्रु था तथा पाण्ड्यों का मित्र एवं सहायक भी था। इस राज्य ने भी चोलों के विरुद्ध अपना सर उठाया था। जिस समय राजराज राज्य कर रहा था उस समय लंका पर Mahinda V राज्य कर रहा था। इसलिये राजराज ने महिन्द V पर आक्रमण कर दिया और उसे पराजित कर दिया। महिन्द V ने अपनी राजधानी अनुराधपुर छोड़ कर भाग गया। राजराज के सैनिकों ने अनुराधपुर को खूब लूटा। राजराज ने लंका में पोलोन्नरुव पर अपनी सैनिक छावनी बनाई और बाद में इस प्रदेश की राजधानी बनाई जो कि राजराज के आधीन था। राजराज ने यहां एक शिव मन्दिर की स्थापना किया। यह पत्थर का मन्दिर था।

जिस प्रकार रामचन्द्र ने बन्दरों के द्वारा समुद्र पार करके तथा

अपनी नुकीले बाणों द्वारा लंका विजय किया था। उसी प्रकार राजराज ने अपने शक्तिशाली सैनिकों द्वारा समुद्र पार करके लंका को अपने अधीन कर लिया था।

Tiruvalangadu plates में लंका विजय का सुन्दर चित्र प्रस्तुत करती है।

"Rama built, with the aid of the monkeys, a causeway across the sea and then slew with great difficulty the king of Lanka by means of sharp-edged arrows. But Rama was excelled by this (King) whose powerful army crossed the ocean by ships and brunt up the king of Lanka."

गंग पर विजयः—राजराज ने पाण्ड्यों, चेर और लंका के शासकों को पराजित करने के पश्चात् उसने अन्य तीन प्रदेशों को भी अपने अधीन कर लिया ये तीन प्रदेश गंग राज्य के अन्तरगत आते हैं। गंगवड़ो नोलम्बड़ी और तदिगैवड़ी। राजराज ने अपनी विजय तदिगैवड़ी से आरम्भ किया और फिर Kongu से होते हुये कावेरी को पार करते हुये गंग राज्य पर आ पहुँचा। इस प्रकार उसने सम्पूर्ण गंग राज्य पर अपना अधिकार कर लिया।

चालुक्यों से युद्धः—जिस समय राजराज ने चालुक्यों पर आक्रमण किया। उस समय चालुक्यों की दो शाखा थीं। एक शाखा नर्मदा और तुंगभद्रा नदियों के बीच में स्थित थी यहां पश्चिमी चालुक्यों का राज्य था। इसकी राजधानी कान्यखेट थी राजराज के समय में यहां सत्याश्रय राज्य कर रहा था। दूसरी शाखा पूर्वी दक्षिण पथ पर स्थित थी। चालुक्यों की पूर्वी शाखा की राजधानी वेंगी थी जिसके कारण इसको वेंगी के चालुक्य भी कहते थे। राजराज के समय में इस स्थाण पर दानार्णव राज्य कर रहा था। यह उतना शक्तिशाली

नरेश न था। लेकिन पश्चिमी चालुक्यों के नरेश बहुत ही शक्तिशाली योग्य और महत्वकांक्षी शासक थे।

वेंगी के चालुक्यों के साथ सम्बन्ध:—जिस समय राजराज चोल वंश की गौरव को पराकाष्ठा पर पहुँचने में व्यस्त था उसी समय तेलगू जटाचोड भीम अपनी शक्ति बढ़ा रहा था और जाटचोड भीम ने वेंगी के चालुक्य नरेश दानार्णव पर आक्रमण करके उसे मार डाला फलस्वरूप दानार्णव के पुत्रों ने भाग कर राजराज के पास शरण के लिये आया। राजा ने उन लोगों की सहायता की। राजराज ने तेलगू जटाचोड़ भीम पर आक्रमण करके तथा उसे पराजित करके वेंगी को छीन लिया और उन पुत्रों में से बड़े पुत्र शक्तिवर्मन I को वेंगी के सिंहासन पर बैठाया। राजराज ने वेंगी के साथ वैवाह पूर्ण सम्बन्ध भी स्थापित किया। उसने शक्तिवर्मन I के छोटे भाई विमलादित्य के साथ अपनी पुत्री कुन्दबाई का विवाह कर दिया।

पश्चिमी चालुक्यों से युद्ध:--राजराज ने वेंगी को अपने आधीन करने के पश्चात् पश्चिमी चालुक्यों पर आक्रमण किया। इस आक्रमण का वर्णन Karandai Plates के उल्लेख है। इस समय यहां सत्याश्रय राज्य कर रहा था यह बहुत ही शक्तिशाली शासक था किन्तु राज-राज भी उससे कुछ कम न था। युद्ध का कारण वेंगी ने प्रस्तुत किया। Karandai plates के आधार पर K. A. Nilakanta Sastri ने इसका उल्लेख किया:—

"Rajaraja's elephant are said to have wrought havoc on the banks of Tungabhadra. Seated on his war horse, he is said, sengle-handed to have chaked the rush of the advancing chalukya army like Siva restraining with his Jata the force of Ganga's descent on earth."

युद्ध के कारण :—जिस समय राज राज ने वेगों के राज्य को अपने आधीन करके अपने राज्य को बढ़ा रहे थे, उसी समय उसकी बढ़ती हुई शक्ति का दमन करने के लिये पश्चिमी चालुक्य नरेश सत्याश्रय ने वेगी पर आक्रमण कर दिया, और कुछ स्थान को अपने आधीन कर लिया। राज राज इस विजय को सहन न कर सका तथा वेगी राज राज का सम्बन्धी भी था। वह क्रोधित हो उठा तथा वेगी को सत्याश्रय से मुक्त कराने के लिए उसी समय उसको पराजित करने के लिए राज राज ने अपने पुत्र राजेन्द्र को एक विशाल सेनाओं के साथ पश्चिम में भेजा।

K. A. Nilakanata Sastri ने Karandi Plates के अन्तिम पंक्ति को इस प्रकार उल्लेख किया है:—

"Rajaraja had taken a vow to Capture Manyaheta the Chlukya Capital and that Rajendra fulfilled the vow."

युद्ध का वर्णन :—राजेन्द्र भी एक वीर योद्धा था उसने पश्चिमी चालुक्यो पर आक्रमण करते ए उसकी राजधानी मान्यखेट तक पहुँचा। उसने सम्पूर्ण पश्चिम पर त्रास नाश कर दिया और राजधानी को खूब लूटा उसने बड़ा ही अत्याचार किया। स्त्रियों बच्चों तथा ब्राह्मणों को मौत के घाट उतार दिया।

K. A. Nilakanta Sastri के अनुसार "With an army an army of 900,000 troops Plundered the whole Country, Killed women, Children and Brahmans, Caught hold of girls and destroyed their Caste"

Karandai plates के अनुसार राजेन्द्र ने चालुक्य General Kesaba को बन्दी बना लिया। ऐसी अवस्था में सत्याश्रय को विवश

होकर वेंगी परित्याग करके अपने राज्य में पुन: लौटना पड़ा इस प्रकार सत्याश्रय पराजित हो गया। वेंगी पुन: स्वतंत्र हो गया।

जहाजी बेड़ा :—राज राज के लंका विजय से अनुमान लगता है कि उसके पास एक शक्तिशाली जहाजी बेड़ा था जिसमें उसने अनेक दक्ष नौ सेनाध्यों को नियुक्त कर रखा था। राज राज के इन जहाजी बेड़ों ने मालद्वीप तथा कुछ अन्य द्वीपों पर भी अधिकार लिया।

शैलेन्द्र :—Largerlayden grant of Raj Raj के अनुसार राज राज एक शक्तिशाली शासक था। प्रारम्भ में उनका सम्बन्ध शैलेन्द्र राज्य के साथ अच्छा था Tamil कवियों ने भी उन दोनों राज्यों के शासकों के अच्छे सम्बन्ध का वर्णन किया। साथ ही साथ दोनों राज्यों में व्यापारी सम्बन्ध भी था। लेकिन कुछ समय पश्चात यह मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध विच्छिन्न हो गया। राज राज के समुद्र बेड़ों ने शैलेन्द्र राज्य को नष्ट कर दिया। Malur Patan Inscription of Raj Raj के अनुसार समुद्र युद्ध का वर्णन मिलता है। जिसमें राजराज ने शैलेन्द्र शासकों को पराजित कर दिया था।

राजराज के इन विजयों से इस बात को सिद्ध कर देता है कि वह एक महान विजेता था, किन्तु इसके अलावा वह एक सुयोग्य शासक भी था। उसने अपनी शक्ति के द्वारा सम्पूर्ण साम्राज्य की नीव सुदृढ़ करके एक बन्धन में बांध लिया। साम्राज्य का नियंत्रण स्वयं करता था।

उसने अपने समय में भूमिका निरीक्षण कराया था जिस कारण कर ठीक समय पर तथा निश्चित दर पर वसूल होता था। उसके समय में प्रजा सुखी थे।

राजराज शिव का परम भक्त था।

राजराज ने अनेक उपाधियों को धारण किया था जैसे :—
Rajasraya, Rajamartanda Singalantaka अपने राज्य काल में अपने पुत्र राजेन्द्र को युवराज घोषित कर दिया था।

Rajendra I 1014-44 A.D.

चोल वंश का द्वितीय महान सम्राट राजेन्द्र प्रथम था। राज-राज ने अपनी जीवन काल में ही अपने पुत्र राजेन्द्र को युवराज घोषित कर दिया था। राजराज की मृत्यु क पश्चात राजेन्द्र चोल सिंहासन पर बैठा। वह अपने पिता से भी अधिक शक्तिशाली योद्धा था। उसने अपने राज्य काल में अनेकों युद्ध किया और सब नरेशों को पराजित कर दिया था। उसने अपनी भुजाबल के द्वारा भारत के चारों दिशाओं को अपने आधीन कर लिया था। जिससे अनुमान लगता है उसका राज्य चारो दिशाओं में फैला हुआ था। Tirumalavadi लेख में इस प्रकार वर्णन मिलता है।

"Who conquered with his army the Ganges in the Narth, ceylon in the south, Mahodai in west and Kad-aram in the East."

लंका से युद्ध :—राज राज ने लंका के शासक महिन्द V को पराजित करके अपने आधीन कर लिया था। किन्तु राजेन्द्र के शासन काल में महिन्द्र V के पुत्र कस्यप ने लंका पर पुनः अधिकार कर लिया। इससे राजेम्द्र ने उसे पराजित करके लंका को अपने आधीन कर लिया था।

"Karandi (Tanjore) plates के अनुसार Rajendra conquered the king cf ceylon with a fierce army and seized his territory............the king of ceylon, came and sought the two feet of ajendra as shelter."

पाण्ड्यों और चेरो :—लंका पर विजय करने के पश्चात राजेन्द्र ने उसी वर्ष पाण्डय तथा चेरो पर आक्रमण करके दोनों राज्यों को जीत कर अपने साम्राज्य के आधीन कर लिया था। उन दोनों प्रदेशों का एक ही साम्राज्य शासन विभाग बनाकर अपने पुत्र को वहाँ का गवर्नर नियुक्त किया। उसका पुत्र उस विभाग का शासन सुचारु रूप से करने लगा और अपने पिता को समय समय पर सहायता करने लगा। इन प्रान्तीय शासक को चोल—पाण्डेय की उपाधि दी गई और उसकी राजधानी मदुरा थी। राजेन्द्र ने मदुरा में एक विशाल महल बनवाया K.A. Nilakanta sastri "by whose weight the earth became unsteady."

चालुक्य से युद्ध :—राजराज के समय से ही यह पुराना बैर चलता आ रहा है। और राजेन्द्र के समय में भी जारी रहा। Belagamve लेख में भी इस युद्ध का उल्लेख मिलता है। उस समय चालुक्यों की दो शाखायें थीं पूर्वी और पश्चमी। पश्चिमी चालुक्य राजराज के समय से ही पूर्वी चालुक्य को अपने आधीन करना चाहते थे। लेकिन राजराज के समय में यह इच्छा सफल न हुई। राजेन्द्र के समय में भी यह लोग मौका देख रहे थे। अन्त में पश्चिमी चालुक्यों ने पूर्वी चालुक्यों की गृह कलह में भाग लेकर फायदा उठाना चाहते थे। लेकिन राजेन्द्र ने पश्चिमी चालुक्य नरेश जयसिंह II पर आक्रमण कर दिया।

युद्ध का कारण :—राजराज के शासन काल में पूर्वी चालुक्य की शाखा में शक्तिवर्मन I राज्य कर रहा था। कुछ समय पश्चात उसकी मृत्यु हो गयी और उसका पुत्र विमलादित्य सिंहासन पर बैठा लेकिन थोड़े ही समय में उसकी भी मृत्यु हो गई। उसके दो पुत्र में उत्तराधिकारी के लिये कलह आरम्भ हो गई। इस अवसर पर पश्चिमी चालुक्य नरेश जयसिंह I ने उन दो पुत्रों में

एक पुत्र विजयादित्य का पक्ष लिया और राजेन्द्र ने दूसरा पुत्र राज-राज का पक्ष लिया क्योंकि यह चोल राजकुमारी कुन्दवई का पुत्र था।

युद्ध :—दोनों पक्षों में भयंकर युद्ध छिड़ गया। Tamil Verse से अनुमान लगता है कि राजेन्द्र ने Kalingas और Oddas के नरेशों के साथ युद्ध किया था लेकिन अन्य लेखों के आधार पर यह अनुमान लगता है कि जयसिंह ने राजेन्द्र से भयभीत होकर उन नरेशों से सहायता ली थी। फलस्वरूप उन दो शासकों ने भी राजेन्द्र के साथ युद्ध किया था। लेकिन इस पर मतभेद है Triuvalang-adu plates के अनुसार राजेन्द्र ने जयसिंह तथा विजयादित्य को पराजित करके वेगों के राज्य पर राजराज को बैठाया। कुछ समय पश्चात् विजयादत्त ने पुनः राजराज पर आक्रमण करके उससे वेगी का राज्य छीन लिया और विष्णुवर्धन विजयादत्त सप्तम के नाम से सिंहासन पर बैठा। पुनः इन दो भाइयों में युद्ध छिड़ गया लेकिन उस समय राजेन्द्र की मृत्यु हो गई थी।

दिग्विजय :—राजेन्द्र ने पश्चिमी चालुक्य नरेश जयसिंह को पराजित करके दिग्विजय के लिए एक विशाल सेना उत्तर भारत की ओर भेजी। यह सेना विस्तार और उड़ीसा होते हुए बगाल पहुँची। तिरुमलै लेख के अनुसार राजेन्द्र ने उड़ीसा, दक्षिण कोशल, तडवुत्ति के धभपाल, दक्षिण राढ़ के रणशूर, पूर्वी बंगाल के गोविन्दचन्द्र, पाल-राज महीपाल तथा उत्तर राढ़ को जीता। परन्तु चोल सेना उन स्थानो पर रुकी नहीं बल्कि उन नरेशों को पराजित करते हुए वहाँ से गंगा जल लेकर अपने देश लौटी। राजेन्द्र ने इस विजय के पश्चात "गंगै कोंड चोल" की उपाधि धारण की। कुछ विद्वानों का मत है कि राजेन्द्र का उद्देश्य पूर्वी भारत में चोल राज्य की स्थापना करना न था बल्कि गौरव प्राप्त करना था। कुछ विद्वानों का मत है कि यह

उसकी दिग्विजय थी। K.A. Nilakanta Sastri के अनुसार "Rajendra's reign formed the most splendid period of the history of the colas of the Vijayalaya line. The extent of the empire was at its widest and its military and naval prestige stood at its highest."

श्रीविजय :—राजेन्द्र न केवल भारत के चारों दिशाओं पर अपनी विजय पताका फहरायी वल्कि उसने विदेशों में भी अपना सम्बन्ध स्थापित किया। उसने पहले श्रीविजय के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित किया और उसके राजदूत श्रीविजय से होकर ही चीन जाते थे। लेकिन कुछ समय के पश्चात उन दोनों राज्यों के मित्रतापूर्ण सम्बन्ध विच्छिन्न हो गये। फलस्वरूप राजेन्द्र ने श्रीविजय पर आक्रमण कर दिया। आक्रमण का कारण निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है।

श्री विजय और शैलेन्द्र की समानता

Shri Coedes के अनुसार शैलेन्द्रों के मूल स्थान श्रीविजय था। Dr: Majumdar के अनुसार "Shri Vijaya belongs to Sailandra Dynasty" अब प्रश्न उठता है कि राजेन्द्र ने शैलेन्द्र पर विजय प्राप्त किया या श्रीविजय। इस प्रश्न में हम कह सकते हैं कि शैलेन्द्र सम्राट को "Kataha" और Sri Vijaya के सम्राट से भी पुकारते थे।

युद्ध :—तंजोर लेख के अनुसार राजेन्द्र ने श्रीविजय पर आक्रमण कर दिया उसने अनेक जहाज कडराम के शासक संग्राम विजयोत्तुङ्ग वर्मन के विरुद्ध भेजा। राजेन्द्र की जहाजी सेना बड़ी ही शक्तिशाली थी। संग्राम विजयोत्तुग वर्मन उन सेनाओं को रोक न सका फलस्वरूप वह बन्दी बना लिया गया और बहुत से हाथी, राजकोष तथा प्रचुर

मणियों राजेन्द्र के हाथ में आ गया। विजयोत्तुगवर्मन ने राजेन्द्र की आधीनता को स्वीकार कर लिया। राजेन्द्र ने उसे मुक्त कर दिया। Malur लेख में समुद्र युद्ध तथा इस विजय का उल्लेख मिलता है।

विद्रोह :—राजेन्द्र के शासन काल में पाण्डयों और चेरों ने अपनी स्वतन्त्रता के लिये उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया। राजेन्द्र ने अपने पुत्र युवराज राजाधिराज के साथ एक विशाल सेना देकर उन विद्रोहों का दमन करने के लिए भेजा। राजाधिराज ने दोनों को पराजित कर दिया और उनको कठोर दण्ड दिया जिससे वे पुनः सर न उठा सके।

इसके देखा देखी लंका ने भी उसके विरुद्ध] स्वतन्त्रता संग्राम प्रारम्भ कर दिया। राजाधिराज ने लंका पर आक्रकण किया किन्तु उसको पूर्ण रूप से दमन न कर सका।

राजेन्द्र ने अपने बल से पैतृक साम्राज्य की रक्षा करते हुए उसके गौरव को पराकाष्ठा पर पहुँचा दिया। R. Sathianathaier के अनुसार "Rajendra, the greater son of a great father was atcive for about thirty two years in extending the power and prestige which the chola Empire had acquired during the previous reign".

Achievenments of Rajendra :—राजेन्द्र न केवल एक कुशल योद्धा था बल्कि वह एक महान निर्माता और विद्या प्रेमी भी था। उसका पहला निर्माण कार्य यह था कि उसने पाण्डयों और चेरों को पराजित करके उस प्रान्त की राजधानी मदुरा पर एक विशाल महल निर्माण कराया। यह विशाल तथा अपूर्व था। इस महल की विशालता पर मत प्रकट करते हुये K. A. Nilakanta Sastri

इस प्रकार उल्लेख करते हैं। "by whose weight the earth became unsteady"

राजेन्द्र ने पूर्वी भारत पर विजय करने के पश्चात वहाँ से पवित्र गंगाजल अपने साथ लाया। इस गंगा—जल को एक नवनिर्मित तड़ाग "चोलगंगम" से संग्रहीत कराया और यहाँ पर विशाल चबूतरा निर्माण कराया। यह तड़ाग और चबूतरा उसके महान निर्माण कार्य की ओर संकेत करता है। यह कार्य उसके धर्म की ओर भी संकेत करता है क्योंकि वह पवित्र गंगा जल को अपने राज्य के तड़ाग में रख कर अपने साम्राज्य को पुनीत करना चाहता था। यह तड़ाग विशाल था। इस तड़ाग से सम्बन्धित एक बाँध भी निर्माण कराया लेकिन किसी शत्रु सेना ने नष्ट कर दिया।

उसने अपने राज्यकाल में "गंगैकोण्डचोलपूरम" नामक एक नगर बसाया और यहीं अपनी राजधानीं बसाई। इस राजधानी में एक विशाल राजप्रासाद बनवाया तथा सुन्दर प्रस्तर मूर्तियों से अलकृत एक मंदिर भी बनवाया।

वह एक विद्या प्रेमी होने के कारण, उसने एक वैदिक कालेज की स्थापना की थी जिसमें ३०० छात्र वेद आदि पढ़ते थे। इस कालेज में १४ वेद पंडित थे।

चोल और शैलेन्द्र या श्री विजय से सम्बन्ध

प्रसिद्ध लाइडेन लेख में दोनों राज्य के सम्बन्ध के बारे में इस प्रकार वर्णन है कि प्रारम्भ में दोनों राज्यों का सम्बन्ध अच्छा था। अब यह विचार करना पड़ेगा कि शैलेन्द्र तथा श्रीविजय में क्या अन्तर था तथा इनका मूल निवास स्थान कहाँ था।

उसमें पूर्वी द्वीप समूह पर विजय का उल्लेख मिलता है। जिसके अन्तरगत शैलेन्द्र राज्य भी सम्मिलित था।

४—Tanjor के लेख में भी राजेन्द्र के साथ समुद्र युद्ध का उल्लेख मिलता है। यह युद्ध शैलेंद्र के साथ हुआ था।

५—Kanya Kumari लेख में भी राजेन्द्र के साथ समुद्र युद्ध का वर्णन मिलता है जिससे अनुमान लगता है कि दोनों राज्य में युद्ध हुआ था।

चोल शासकों के अनेक लेख इस बात के साक्षी है कि राजेन्द्र ने शैलेन्द्र साम्राज्य को जीत लिया था। राजेन्द्र के 1017—18 A.D. के लेख से ज्ञात होता है कि वास्तव में इसी समय चोल एवं शैलेंद्र का संघर्ष शुरू हो गया था और राजेन्द्र चोले के 13 वें वर्ष (1024 A D—1025 A D) में शैलेन्द्र का साम्रजाय विच्छिन्न हो गया था।

संघर्ष का कारण:—चोल एवं शैलेन्द्र शाषकों के बीच इस संघर्ष के कारण पर प्रकाश डालते हुए श्री एस. के आयंगर कहते हैं कि "The kalings were possibly rivals in over sea Empire in connection with which the over sea expedition wasactu-ally taken"

Dr: Majumdar युद्ध के कारण को और स्पष्ट भी कहते हैं। "But it is quite clear that the conquest of kalings and whole coastal region finished the chola Emperor with ampl resources for his overseas expedition. The Mastery over the ports of kalinga and Bengal gave him well equipped ships and sailors accustomed to voyage in very reason which he wanted to conquer·········The Geographical poistion of the sailandra Empire enabled yet it to contr-

लाइडेन लेख के अनुसार राजराज के राज्यकाल के २१ वें वर्ष में मारविजयोत्तुङ्गवर्मन ने, जा काटह और श्रीविजय का शासक और शैलेन्द्र का वंशज था, नागीपट्टन के बौद्ध बिहार के लिए एक गांव दान में दिया और इसकी पुष्टि चोल शासक ने किया था।

राजराज के लेख के अनुसार श्री मारविजोत्तुंगबर्म व कटाह और श्रीबिजय का शासक था। राजराज के समय इनके साथ व्यापारिक सम्बन्ध था।

कुछ Tamil कवियों ने भी उन दोनों के अच्छे सम्बन्धों का वर्णन किया। साथ ही दोनों राज्यों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध था। व्यापारिक लोग जहाज में आते थे और अपने साथसामान भी लाते थे।

इस प्रकार दोनों राज्यों के बीच राजनैतिक और व्यापारिक सम्पर्क आरम्भ में जारी था, पर यह मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध अधिक समय तक न चल सका और शाघ्र ही किसी कारण बस दोनों शक्तियों के सम्बन्ध ने संघर्ष का रूप धारण कर लिया जल्द हा यह मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बिच्छिल हो गया।

संघर्ष १:—राज राज के २३ वें वर्ष (1007 .A.D) के मलुर्पत्न से प्राप्त कई लेखों में कंड्लूर जहाजों के नष्ट होने तथा भयंकर समुद्र युद्ध का वणंन है। सम्भवतः यह युद्ध शैलेंद्र के साथ हुआ था।

२—राजेन्द्र के राज्यकाल के छटे वर्ष (1017—1018) तिरुवलगुंड के लेखों में सम्राट की कटाह बिजय तथा समुद्र पार कर सब राजाओं को अपने आधीन करने का उल्लेख है।

३—मलूर के मन्दिर के एक लेख में पूर्णरूप से समुद्र युद्ध तथा

उसमें पूर्वी द्वीप समूह पर विजय का उल्लेख मिलता है। जिसके अन्तरगत शैलेन्द्र राज्य भी सम्मिलित था।

४—Tanjor के लेख में भी राजेन्द्र के साथ समुद्र युद्ध का उल्लेख मिलता है। यह युद्ध शैलेंद्र के साथ हुआ था।

५—Kanya Kumari लेख में भी राजेन्द्र के साथ समुद्र युद्ध का वर्णन मिलता है जिससे अनुमान लगता है कि दोनों राज्य में युद्ध हुआ था।

चोल शासकों के अनेक लेख इस बात के साक्षी है कि राजेन्द्र ने शैलेन्द्र साम्राज्य को जीत लिया था। राजेन्द्र के 1017—18 A.D. के लेख से ज्ञात होता है कि वास्तव में इसी समय चोल एवं शैलेंद्र का संघर्ष शुरू हो गया था और राजेन्द्र चोले के 13 वें वर्ष (1024 A D—1025 A D) में शैलेन्द्र का साम्रजाय विज्छिन्न हो गया था।

संघर्ष का कारण:—चोल एवं शैलेन्द्र शाषकों के बीच इस संघर्ष के कारण पर प्रकाश डालते हुए श्री एस. के आयंगर कहते हैं कि "The kalings were possibly rivals in over sea Empire in connection with which the over sea expedition wasactually taken"

Dr: Majumdar युद्ध के कारण को और स्पष्ट भी कहते हैं। "But it is quite clear that the conquest of kalings and whole coastal region finished the chola Emperor with ample resources for his overseas expedition. The Mastery over the ports of kalinga and Bengal gave him well equipped ships and sailors accustomed to voyage in very reason which he wanted to conquer·········The Geographical poistion of the sailandra Empire enabled yet it to contr-

of almost whole all the·········trade between Western and Eastern Asia and the dazzling prospect which its conquest offered to the future commercial supremacy of the commerce seems to the principal reason of the over sea expeditions under take by Rajendra chola"

राजेन्द्र चोल के आक्रमण का परिणाम शैलेन्द्र राज्य के शासक संग्रामविजतुवर्मन का अन्त था। राजेन्द्र के निरन्तर आक्रमण से शैलेन्द्र साम्राज्य को बहुत धक्का पहुँचा जिस कारण शैलेन्द्र का राज्य पतन की ओर अग्रसित होने लगा था लेकिन राजेन्द्र के बाद शैलेन्द्र ने राज्य शक्ति प्राप्त कर लिया था।

Chola Administration

सुदूर दक्षिण की सबसे शक्तिशाली राज्य चोल था। इस राज्य के अन्तरगत अनेक महान शासकों के नामों का उल्लेख मिलता है जिन्होंने अपनी शक्तियों के द्वारा इस राज्य की नीव को सुदृढ़ किया। इस वंश में राज राज, राजेन्द्र, राजाधिराज प्रथम, तथा कुलोत्तुङ्ग प्रथम आदि ने साम्राज्य निर्माण तथा संगठन हेतु एक सुदृड़ शासन व्यवस्था किया था इन शासकों ने विभिन्नों भांगों को जीत करके एक सुन्दर केन्द्रीय तथा स्थानीय शासन व्यवस्था भी किया था।

Government of the Chola Empire

चोल शासन व्यवस्था राजतन्त्रात्मक थी। यह सिद्ध हो चुका कि महान शासकों ने अपनी बाहुबल के द्वारा इस राज्य को एक विशाल साम्राज्य में परिणत कर दिया था जिस कारण राजा का प्रभुत्व अधिक बढ़ गया था। केन्द्रीय शासन की बागडोर स्वयम् राजा के हाथ में होती थी।

King :— साम्राज्य का प्रधान राजा होता था उसका पद

साधारणतया पैतृक होता था। राजा अपनी प्रतिष्ठाको बढ़ाने की चेष्टा किया करता था। राजा समय पर बड़े बड़े यज्ञ और दान करता था। राजा का पद आदरणीय समझा जाता था। राजा प्रजा कों आज्ञा देता था उस आज्ञाओं को लिख लिया जाता था।

Capital :—राजा के पास एक से अधिक राजधानी होती थी जिस समय विजयालय ने पुन: इस राज्य की स्थापना की उस समय उसने राजधानी बनाई। बिजयालय के बाद जब पल्लव को राजधानी जीती गई तो चोलों ने काँची को अपनी राजधानी बनाई किन्तु पहले वाली राजधानी को नहीं हटाया बल्कि उसकी देख रेख के लिये वहां कई प्रान्तीय शासक को नियुक्त कर देते थे और राजा स्वयं नयी राजधानी पर बैठ कर शासन करता था।

राजा अपनी प्रतिष्ठा के लिये अनेक यज्ञ तथा निर्माण कार्य करता था। वह अपने नाम पर विशाल मन्दिरों का निर्माण करता था। मन्दिरों में उसकी एवं उसकी रानी की मूर्तियां स्थापित की जाती थी राजराज ने एक विशाल मन्दिर का निर्माण कराया था। लेखों से ज्ञात होता है कि राज राज ने virasola नामक एक बड़ी सड़कें तथा Tribhuvana-mahadevi yar नामक बजार का निर्माण कराया था।

Royal household :—राजा के पास अनेक दास दासी नौकर चाकर होते थे और Body Guards भी होते थे जो कि Tirumey—kappar के नाम से परचित थे। राजा के रसोई घर तथा Bath-room का स्त्रियों के द्वारा संचालन होता था।

Chinese writer Chau-Ju-kua ने राजा के भोजन के बारे में इस प्रकार उल्लेख किया "At state banquets" "Both the Prince and four court Miminters salaam at the foot

of the throne, then the whole (company present) break into music, song and dancing: He (the prince) does not drink wine, but he eats meat, and, as is the native custom, dresses in cotton clothing, and eats Flourcakes, fully a myriad dancing-girls, three thousand of whom are in attendance daily in rotation."

राजा बड़े बड़े सामन्तों, पदाधिकारियों एवं अधीन राजाओं से घिरा रहता था।

Dana :—राजाधिराज प्रथम के लेख से अनुमान लगता है कि उसने अश्वमेध यज्ञ किया और राजा लोग यज्ञ में अनेक दान देते थे। इसके अलावा राज लोग समय समय पर प्रचुर दान करते थे। यह दान केवल धर्म की ओर संकेत नहीं करता है बल्कि राजा अपने इन गुणों को प्रजा के सामने रखते थे। जिससे प्रजा इनके शासन पर प्रभावित हो सके। इस दान से राजा को प्रजा पालक की ओर आकर्षित करता था। Prof. Nilakanta Sastri के अनुसार"More emphasis seems to be laid in this period on dana, gift, in preference to yaga, sacrifice" उस समय राजा अनेक ग्रामों को ब्राह्मणों को दान में देते थे। इस प्रकार दान में दिये हुए ग्रामों को 'चतुर्वेदिमङ्गलमं" कहलाते थे।

Raja—Guru :—राज गुरू पुरोहित के तरह होता था। यह राजा को सलाह देता था। इसका स्थान सब मंत्रियों से सर्वोच्च होता था। उनको राजा का गुरू माना जाता। राजा इनके कहने पर सब कुछ करते थे। mysore लेख के अनुसार कुलोत्तुंग प्रथम अपने गुरू के कहने पर चलता था तथा उसे सलाह लेता था। prof: Nilaanta sastrie के अनुसार "in the reign of kulottunga III shows that the guru generally acted as tbe kings adviser in the administration of religious institutions"

Appointment of the min'sters:—राजा अपने जीवन काल में ही अपने सबसे बड़े अथवा सबसे योग्य पुत्र को अपना 'युवराज' नियुक्त करता था। साम्राज्य के उच्चतम पदाधिकारियों की नियुक्ति भी राजा ही करता था। पदाधि कारियों की नियुक्ति तथा पदोन्नति उनके गुण के अनुसार होती थी। नियुक्ति के पहले उनका जन्म तथा चरित्र को देखा जाता था उसके बाद उसकी योग्यता पर ध्यान दिया जाता था। इनका वेतन नकद के बदले भू-खण्ड दे दिया जाता था इससे यह राज्य की शासन व्यवस्था से खूब लाभ दायक सिद्ध हुआ। लोग अपनी भूमि सोच कर खूब फसल उगाते थे और उसकी देख रेख उन्हीं के हाथों में रहता था। राजा केवल नियंत्रण करता था।

Administrative divisions:—राज्य अथवा राष्ट्र अनेक मंडलों में विभक्त था। जिनसे प्रत्येक के शासन के लिए एक शासक नियुक्त था। इन प्रान्तों के शासक बहुधा राजकुमार युवराज होते थे। इनमें से कुछ प्रान्त चोल सम्राटों द्वारा विजित प्रदेश भी थे।

प्रत्येक मण्डल मे अनेक "वलान्दु" (बड़े प्रदेश) होते थ। प्रायः इसको "नाडु" के नाम से पुकारा जाता था। नाडु में अनेक "कुर्रम" (अनेम ग्रामों का समूह) होते थे। कुर्रम में बहुसंख्यक नगर और ग्राम होते थे।

मण्डलः—इसका शासन राजा द्वारा नियुक्त वायसराय के द्वारा होता था यह पद प्रायः राजकुमार, राजवंशीय अथवा कोई बड़ा सामन्त होता था प्रत्येक इकाई के प्रशासन मे वहाँ की जनता का भी सहयोग लिया जाता था। लेखों से अनुमान लगता है कि प्रत्येक मण्डल 'वलान्दु' और नाडू मे विभाजित किया जाता था।

२ वलान्दुः—नामक शासन इकाई में कई जिले होते थे।

३ नाडुः—सम्भवतः आधुनिक जिले के समतुल्य था।

४ कुर्रमः—कई ग्रामों के समूह को कुर्रम कहते थे।

Prof:—NilaKanta Sastari के अनुसार "A number of kurrams made up a valanadu, often also called nadu in the region where the smaller division was called kottom"

राजा राजधानी से लेकर अपने साम्राज्य के दूरस्थ प्रदेशों तक के प्रशासन पर दृष्टि रखता था। समय-समय पर अपने साम्राज्य का दौरा भी करता था।

Army:-राजा सेनाओं का प्रधान होता था युद्ध के समय राजा सेना पति का कार्य करता था। चोलों के पास एक स्थाई सुविशाल सेना थी। राज राज के लेखों में ३० सैनिक पल्टनों का उल्लेख मिलता हैं। जिसमें सम्पूर्ण सेना की सख्या १ लाख ५० हजार थी इसमें ६० हजार हाथी थे। सेना में अनेक दल होते थे जिसको अलग-अलग नाम से पुकारा जाता था और उनका अलग विभाग होता था।

१—हाथियों के दल या सेना को Anaiyatkal, kunjiram-allar कहते थे।

२—अश्वारोहि सेना को Kudiraiccevagar कहते थे।

३—धर्नुधारी को—Villigal कहतेथे।

४—तलवार धारी सेना को Valperra Kaikkolar कहते थे। यह राजा का अंगरक्षक भी होता था। दक्षिणपार्श्व के पदाति—Valangi velaikkarar होते थे।

घोड़ों और हाथी को बाहर से मगाते थे। घोड़े प्रायः अरब देश से मगाये जाते थे। इसके अलावा कुछ रथ सैनिक भी होते थे। सेना की टुकडियां सैनिक छावनियों (कडंगम) में रहती थी। इन सैनिकों को सैनिक शिक्षा दी जाती थी। युद्ध के समय जब यह लड़ने जाते थे तो इनके परिवारों राज्य की ओर से सहायता दी जाती थी। एक महत्व

पूर्ण बात यह है कि शाँति के समय चोल सेना नागरिक जीवन में भी भाग लेती थी और समय समय पर मन्दिरों को दान इत्यादि देती थी।

सैनिकों में हर जाति के लोग होते थे चोल सेना में ब्राह्मण भी काफी संख्या में भर्ती होते थे।

सेना में राजा प्रथम पंक्ति में विराजमान होता था। युद्ध के समय राजा स्वयं सेना का नेतृत्व करेता था। जिससे अनेक चोल राजाओं ने युद्ध करते करते अपने जीवन को बलिदान कर दिया। जैसे राजा दित्य और राजाधिराज प्रथभ मुत्त-भूमि में लड़ते हुये मारे गये थे। राज के अतिरिक्त सेनाध्यक्ष भी होता था। जो सेनापति कहलाता था। कुछ सेनापति ब्राह्मण थे। जिनको ब्रह्माधिराज कहते थे।

The Navy:—चोल सेनाओं में नौ-सेना का भी एक उच्च स्थान था। इसी की सहायता से राजराज ने श्रीविजय तथा चेरी की नौ-सेना को नष्ट करके उन राज्यों पर अधिकार कर लिया था।

Prof:—Nilakanta Sastri ने इस प्रकार वर्णन किया है।

"The 'numberless Ships' which carried Rajendra's troop across the 'rolling sea' to the conquest of Sri-Vijaya and its dependencies could not have come up suddenly and must be accepted as proof of a steadv naval policy pursued by the Chola monarchs of the period."

सेनाओं में दत्र नाविक भी होते थे जो अपने जहाज को बड़ी सफलता के साथ आगे बढ़ाते थे। तथा शत्रुओं से नष्ट होने से भी बचाते थे। यह जहाजलकड़ियों से बनते थे। Marco Polo के अनुसार "It is a fact that the type of ship built by pieces of wood sewn together is a speciality of the builders of Siraf, th

ship builders of Syria and of Rum (By Zantium) nail, on the contrary, these pieces of wood and never sew them one to the other."

Justice: – चोल शासन के अन्तरगत न्याय व्यवस्था भी थी। न्याय शासन उत्तम रूप से होता था। उस समय जूरी की भी प्रथा थी। स्थानीय संस्थाओं के मुकदमें का फैसला करने का पूर्ण अधिकार था किन्तु अन्तिम अपील राजा के पास की जा सकती थी। यहां अन्तिम फैसला होता था। न्याय कर्त्ता अपील को सुनता था। न्याय को सिद्ध करने के लिये तीन नियमों फो अपनाते थे।

(1) Documents (2) Eye witnesses (3) Finger Prints.

अगर कोइ Documents होता तो उसको पढ़ा जाता था और लिख भी लिया जाता था।

अगर कोई eye witnesses होती थी तो उसको न्याय कर्त्ता के सामने दृश्य का भी बर्णन करना पड़ता था।

अगर कोई चीजों पर Finger Prints मिलता तो उसकी जाँच होती थी। न्याय कर्त्ता इन विषयों पर खूब बिचार करके न्याय कुछ करता था। शारिरिक दंड नहीं दिया जाता था। बल्कि कुछ जुर्माना लेकर छोड़ दिया जाता था। इससे अनुमान लगता है कि चोल न्याय नरम था। कभी कभी अपराधी को कोड़े लगाये जाते थे। अगर कोई भयंकर अपराधी होता तो उसे हाथी के पैरों सें कुचला कर मा डाला जाता थ।

Chines writer Chau Ju-Kua ने इस प्रकार वर्णन किया है। "When any one among the people is guilty of an offence is light, the culprit is tide to a wooden frame and given fifty, seventy, or up to an hundred belows with a stick.

Heinous crimes are punished with decapitation or by being trampled to death by an elephant."

Revenue and Tax.—शासन का यह मुख्य भाग होता था। सम्पूर्ण राज्य का संचालन इस पर आधारित था। कोई भी राज्य का इसके बिना चल नहीं सकता था।

आय:—चोल राज्य की आय के अनेक साधन थे। आय का अलग विभाग था। राज्य की आय खेतों से होती थी। उपजाऊ की दर भूमि के गुण, दोष अथवा सिंचाई पर निर्भर करता था। सम्भवत: उपज का $\frac{1}{3}$ भाग लगान के रूप में ले लिया जाता था। भूमि-कर ग्राम सभायें एकत्र किया करती थी। यह लगान इच्छानुसार सिक्के अथवा उपज के अंश द्वारा दे सकते थे। दुर्भिक्ष पड़ने अथवा बाढ़ आने पर भूमि-कर माफ कर दिया जाता था। समय समय पर भूमि का नाप किया जाता था और कर निर्धारित किया जाता था। भिन्न-भिन्न भूमि-कर होता था जैसे "cultivated land" and "uncultivated land" अगर कोई व्यक्ति भूमि पर फसल न बोकर अन्य कोई धंधा करता हो तो उसके लिये उपजाऊ कर न लेकर धंधा का आय देखकर कर लिया जाता था। अगर भूमि का गुण अच्छा है तो अधिक कर और दोष है तो अल्प कर लिया जाता था।

भूमि कर के अलावा निम्न विषयों पर कर लगाया जाता था।

१—शिल्पियों, जानवरों, स्थल मार्गों और जल मार्गों से कर।

२—खानो, बनों से आय होती थी।

३—श्यवसायों से तथा बाजारों से आय होता था।

राज़कीय लगान ग्राम सभाएँ एकत्र करतीं थी।

१— अन्न का मान एक कलम (प्राय: तीन मन) के समान।

२—कशु—सोने के सिक्के को कहा जाता था।

मण्डल से लेकर ग्राम तक स्थानीय सभायें होती थी। करो का प्रबन्ध 'सभा' के पास होता था। व्यवसाइयों और शिल्पियो को अपनी सभायें थीं। इन्हें 'श्रेणी' और 'पूग' कहते थे।

व्यय:—राज-प्रसाद, नागरिक और सैन्य शासन, नगर निर्माण, मंदिर और पथ निर्माण, सिचाई की नहरों तथा अन्य सार्वजनिक निर्माण के काम में राज्य की ओर से व्यय किया जाता था।

Local Government

चोल शासन में ग्रामों का स्थानीय शासन मुख्य था। इस बात के पर्याप्त प्रमाण है कि चोल का स्थानीय शासन अपनी जनसत्तक सभायें करती थी। ग्राम संस्थाओं के अन्तरगत दो मुख्य नाम उल्लेख मिलते हैं 'ऊर' (Ur) और 'सभा' (sabha)। उन दोनों की कार्य प्रणाली जनतन्त्रात्मक थी।

"उर" (Ur)—गांव की साधारण सभायें "ऊर" कहलाती थी। ऊर स्थानीय निवासियों के असंगठित सम्मेलन थे जो आवश्यकतावश हुआ करते थे।

सभा:—इसके सम्बन्ध में हमारे पास पर्याप्त सामग्री है। इसके अन्तरगत ब्राह्मणों के गाँव (ब्रह्मबेदों) की सभा अथवा महासभा थी। अभिलेखों (विशेषकर उत्तरमेरूर) से ज्ञात सोता है कि गांव की ये सभायें साम्राज्य अधिकारियों के तत्वावधान में जनपद के प्रबन्ध में प्राय: स्वतन्त्र थी औरजुती अथवा परती दोनों प्रकार की भूमि उनके अनुशासन में थी।

उत्तरमरूर लेखों से ग्राम सभा की कार्य प्रणाली तथा ग्राम महासभा के प्रस्ताओं का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। ग्राम सभा शासन

कार्यों के संचालनार्थ कई समितियों का संगठन करती थी। इन समितियों को 'वेरियम' कहते थे इसके निर्वाचन के लिये ग्राम बहुधा ३० वार्डों में विभक्त किया जाता था।

जैसे:—उपवन समिति, ताड़क समिति, कृषि समिति, न्याय समिति और अनेक समिति बनती थी। इस समिति के निर्वाचन में खड़े होने के लिये कुछ योग्यता की आवश्यक थी।

(1) Age—Not below 35 years.
Not above 70 years.
(2) Knowledge of Veda. (Should be educated).
(3) Some property (Land Lord of 1/4 land).
(4) Own House (Living in good position).
(5) Behaviour towards people.
(6) Position in the society.

सदस्य एक वर्ष के लिये ही निर्वाचित होता था। अगर उम्मेदवारों में कुछ त्रुटियाँ होतीं तो उसको समिति से निकाल दिया जाता था और उसका निर्वाचत नहीं होता था। निर्वाचन 'लाट' (Lot system) के द्वारा होता था। इन 'लाट' में जिन लोगों का नाम निकल आता था तथा निर्धारित योग्तायें है तो उसकों निर्वाचित लिया जाता था।

सभा के कार्य:—इसके अन्तरगत अनेक समितियाँ होती थी। जो कि इन सभाओं के अधीन रह कर सुचारु रूप से कार्य करती थी। वे खेती की सिचाई के लिये तड़ागों, नहरों और कूपों इत्यादि का प्रबन्ध करती थी। सभाओं के द्वारा भूमि कर एकत्र करके राजकोष में जमा करते थे। इसके अलावा मन्दिरों का निर्माण एवं जीर्णोद्धार करती तथा व्यय का उचित प्रबन्ध करती थी। ग्राम सभा न्याय का

भी कार्य किया करती थी। गाँव में शिक्षा का प्रबन्ध सभा को करना पड़ता था। इसके अलावा चिकित्सालय की स्थापनां और सड़कों का निर्माण भी ग्राम सभाओं द्वारा होता था। सभा में उदारता की भावनायें भी थी। जैसे अकाल, बाढ़ और दैवी वि्पत्तियों के समय सभा की ओर से सहायता कोष खोलती थी जो की जनता की सहायता करती थी। तथा करों को माफ करती थी।

ग्राम सभाओं को पूर्ण रूप से स्वायत शासन प्राप्त था। राज्य उनके कार्यो में हस्तक्षेप नहीं करता था किन्तु उशके कार्यो पर ध्यान रखता था और उनकी ससायता करने के लिए वह ग्रामों में अपने अधिकारी नियुक्त करता था। अगर यह अधिकारी कोई ग्राम सभाओं के कार्य में त्रूटि देखते थे तो वह राजा को सूचना देता था। राजा उस सभा के विरुद्ध कार्यवाही करता था। मामूली दोष होने पर माफ कर दिया जाता था। लेकिन अगर सभा में आय का दुरुपयोग किया जाता था तो ग्राम सभा पर जुर्माना किया जाता।

सभा अपने कार्य का विवरण रजिस्टर में लिख रखता था। राजा के अधिकारी समय समय पर इस रजिस्टरों को देखते थे। मुख्य दो रजिस्टर होते थे Lan Register और Tax Register अधिकारी इन रजिस्टरों को अधिक ध्यान से देखता था।

सभा जो न्याय का कार्य गाँव में करती थी उसको लिख लिया जाता था। अधिकारी उसका भी निरिक्षण करता था। अगर सभा किसी आपराधी को दण्ड दिया और वह राज। के पास अपील करता तो राजा उसके लिखित कागज या रजिस्टर को मगवाता था।

राज्य की ओर से अनेक गुप्तचर इन सभाओं की रिपोर्ट राजा को देते थे तब राजा अधिकारी को समाचार भेजता था। वे उसका अन्वेषण करते थे।

चेर

निवासस्थान:—चेर अथवा केरल राज्य जो की मालावार तट पर स्थित थे इसके अन्तर्गत आधुनिक कोचीन तथा ट्रावन्कोर के राज्य हैं। इस राज्य का उल्लेख Asokan Inscription Rock edicts NOII में किया गया है। इससे अनुमान लगता है कि यह राज्य दक्षिण में स्थित था। "केरल" "चेर" का ही एक दूसरा नाम है।

जाति और भाषा:—यहाँ के लोग तामिल भाषा बोलते थे। अति प्राचीन काल में यहाँ पूर्व द्रविड लोग निवास करते थे। बाद में द्रविड़ लोग भी आकर इस भूभाग में बस गये। द्रविड़ लोग पूर्व द्रविड़ों से अधिक सभ्य तथा शक्तिशाली थे। इनमें तामिलों का दक्षिण में प्रभाव जम गया पहले केरल अथवा चेर राज्य तामिल देश का ही एक भाग था। बाद में तामिल देश से केरल पृथक हो गया। कालान्तर में वे लोग नई भाषा बोलने लगे जिसे मलयालम कहते हैं।

प्रारम्भिक इतिहास तथा वशं:—यह लोग बड़े शक्तिशाली तथा युद्ध प्रिय होते थे। इनका मुख्य कारण यह था कि भूमि पर्वतीय थी अतः कठिन परिश्रम करना पड़ता था। पहले चेर राज्य की राजधानी करुर थी। बाद में काञ्ची को अपनी राजधानी बनाया। यह एक अति प्राचीन राज्य था। इसके उत्पत्ति के बारे में विद्वानों का मत है। कुछ विद्वानों का मत है कि इस वंश का जन्म एक सोर स्त्री से हुआ था। अन्य विद्वान का मत है इस वशं का उदय एक दासी के गर्भ से हुआ था। यह वशं पहले चोल के आधीन में था। करिकाल ने इस राज्य को पराजित कर दिया था।

चोल शासन प्रणाली का पर्यवेक्षण करने से स्पष्ट होता है कि चोल शासन प्रबन्ध उच्चकोटि का था। सम्भवत इस प्रकार की सुन्दर और उच्च शासन ब्यवस्था सायद ही किसी हिन्दू राज्य के प्रशासन में रहा हो।

Prof.—Nilakanta Sastri के अनुसार "Between on able bureacracy and the active local assemblies which is various ways fostered a live sensc of citizenship, there was attained a high standard of administrative efficiency and purity, perhaps, highest ever attained by a Hindu State"

—:o:—

प्रारम्भ में चोलों से सम्बंध

युद्ध—चेर वंश का प्रथम शासक अथन प्रथम था। यह उतना शक्तिशाली शासक न था। संगम युग में इसने पाण्डय के साथ मिलकर करिकाल की बढ़ती हुई शक्ति को दमन करने के लिये आगे बढ़ा। करिकाल ने ११ जातियों के सरदारों को लेकर Venni के प्रसिद्ध युद्ध में उसे पराजित कर दिया और बन्दी बना लिया। इस प्रकार हम देखते हैं की पहले चेर चोलों का सम्बन्ध अच्छा नहीं था।

मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध:—अथन द्वितीय या अत्ति के समय में चोलो से उनका अच्छा सम्बन्ध था। अथन प्रथम के पश्चात अत्ति चेर सिंहासन पर बैठा। यह चेर वंश का प्रथम महान शक्तिशाली शासक था। उसका शासन काल, गौरवशाली था। अथन प्रथम के समय में कारिकाल ने उस पर आक्रमण कर दिया था लेकिन इसके साथ मैत्रतापूर्ण संबंध स्थापित किया। इसका क्या कारण हो सकता। सम्भवता: इसने करिकाल को पराजित करके उसके पुत्री के साथ विवाह कर दिया या करिकाल उसकी शक्ति तथा महानता को देख कर उसके साथ अच्छा संबंध स्थापित किया। "शिलप्पदिकारम" नामक तामिल ग्रन्थ की एक कथा के अनुसार करिकाल ने अथन प्रथम के साथ भयंकर युद्ध के पश्चात अपनी पुत्री आदि मन्दि (Adi-Mandi) का विवाह चेर राजकुमार अत्ति Atti के साथ कर दिया था। यदि यह सत्य है तो इससे अनुमान लगता है कि प्रारम्भिक युद्ध के पश्चात करिकाल ने चेर वंश के साथ मित्रता कर लिया था।

सेंगत्तुवन:—करिकाल के पश्चात चोल राज्य का पतन हो गया और अत्ति के पश्चात चेर वंश का सर्वमहान् सेन्गुत्तुवन शासक हुआ। उसने अपनी शक्ति के द्वारा इस राज्य का गौरव प्रदान किया उसकी सफलताओं का वर्णन "शिलप्पदिकारम्म" नामक ग्रन्थ में मिलता है।

उसके समय में चोल का सम्बन्ध विच्छिन्न हो गया था। क्योंकि चोल उस समय पतन की ओर अग्रसित हो रहा था। वह एक वीर योद्धा था उसने अपनी शक्ति द्वारा आस पास के शासकों को पराजित करके अपने आधीन कर लिया। उसने पड़ोसी राज्य के साथ बड़ी सफलतापूर्वक युद्ध किया था। समुद्र युद्ध में वह बड़ा दक्ष था। उसके पास अनेक नौ सेनायें भी थीं। उसने इन समुद्र युद्ध में कदम्बो पर आक्रमण करके उसे पराजित कर दिया था। सम्भवतः समुद्र डाकू थे और पश्चिमी तट पर अपना अपना अधिकार जमा लिया था। सेन्गुत्तवन ने दो बार उत्तरी भारत पर आक्रमण किया था और हिमालय पर्वत तक के प्रदेशों पर अधिकार कर लिया था। लेकिन इस कथन पर विद्वानों का मतभेद है।

यह केवल एक योद्धा ही न था बल्कि एक विद्या प्रेमी भी था। वह साहित्यानुरागी था और साहित्यकारों को राजाश्रय प्रदान करता था। उसके उत्तराधिकारी दुर्बल निकले। उत्तराधिकारियों में कोई भी इस राज्य की सुरक्षा न कर सका। इसलिये आठवी शताब्दी ई० तक इस राज्य का पतन काब था।

पुनः चोलों से सम्बन्ध

मैत्रीपूर्ण सम्बन्धः—६०० A D में दोनों राज्यों का उदय हो चुका था और इसी समय दोनो राज्यों में मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध था। विद्वानों के अनुसार दोनों राज्यों में वैवाहिक सम्बन्ध भी स्थापित हो गया था। चोल शासक परान्तक प्रथम ने एक चेर राजकुमारी के साथ विवाह किया था।

युद्धः—परन्तु दसवीं शताब्दी के अन्तिम भाग में दोनों राज्य का सम्बन्ध अच्छा न था क्योंकि इस समय चोल राज्य की शक्ति चरम सीमा तक पहुँच गयी थी। इस समय राजराज चोल वंश का शक्ति-

शाली शासक था । उसने चेर के साथ जो मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध किया था उसको विच्छिन्न कर दिया । राजराज ने चेर पर आक्रमण कर दिया । उस समय चेर नरेश Bhaskara Ravi Varman राज्य कर रहा था । राजराज ने उसे पराजित कर दिया तथा उनका जहाजी बेड़ा नष्ट कर दिया ।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि प्रारम्भ से चेरों का सम्बन्ध चोलों के साथ था । पहले चोलों ने चेरों पर आक्रमण किया फिर मित्रता की दूसरी बार चोलों ने चेरों के साथ मित्रता किया । लन्त में चेर राज्य का अन्त कर दिया ।

—:o:—